ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 21 जनवरी 2018 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 21 जनवरी 2018 से 27 जनवरी 2018

माघ शु.– 04 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 59, अंक 03, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. बागपत में गुणवत्ता-परक शिक्षा पर हुई राष्ट्रीय गोष्ठी

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल बागपत उ.प्र. में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.ई.) की ओर से 'गुणवत्ता–परक शिक्षा' विषय पर राष्ट्रीय स्तर का एक सेमिनार आयोजित किया गया।

इस सेमिनार में मुख्य अतिथि के रूप में केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री भारत सरकार डॉ. सत्यपाल सिंह को आमंत्रित किया गया था। सी.बी.एस.ई. बोर्ड की अध्यक्ष डॉ. अनिता करवाल, सचिव अनुराग त्रिपाठी, क्षेत्रीय अधिकारी देहरादून रीजन आदि ने इस अवसर पर अपने–अपने विचार व्यक्त किये।

डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति के डायरेक्टर डॉ. वी. सिंह, प्रबंधक डॉ. अल्पना शर्मा व डी.ए.वी. बागपत के प्रधानाचार्य डॉ. मुकेश कुमार गुप्ता ने माननीय मंत्री महोदय तथा अन्य उपस्थित सज्जनों का स्वागत किया।

कार्यक्रम का शुभारंभ दीप प्रज्ज्वलन व वेद मंत्रों के उच्चारण के साथ हुआ। इस अवसर पर डी.ए.वी. के छात्र–छात्राओं ने समवेत स्वर में स्वागत गान भी प्रस्तुत किया। सभी अतिथियों को शाल, स्मृति चिह्न

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

डी.ए.वी. शाहबाद मारकण्डा में नववर्ष पर यज्ञ का आयोजन

डी.ए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल शाहबाद मारकण्डा के प्रागंण में नए वर्ष की प्रातः काल यज्ञ और ईश्वर स्तुति की गई। इस यज्ञ में प्रधानाचार्य श्री कंवल गाबा, समस्त अध्यापकगण और सभी गैर शिक्षक स्टाफ ने यज्ञ की पवित्र अग्नि में श्रद्धापूर्वक आहुतियाँ डालकर सबकी मानसिक, शारीरिक और आत्मिक उन्नति हेतु ईश्वर से प्रार्थना की।

इस अवसर पर अध्यापिकाओं ने **'मैं आया शरण तेरी' आपकी कृपा से सब काम हो रहा है 'मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तेरा'** इत्यादि भजन और शब्द गाकर वातावरण को पवित्रता के

साथ–साथ भक्तिमय भी बना दिया।

प्रधानाचार्य महोदय ने सब को नववर्ष की शुभकामनाएँ देते हुए कहा कि हमें ईश्वर पर अटूट आस्था, श्रद्धा और विश्वास रखना होगा। ईश्वर की कृपा जब हम पर बरसती है तो हमारा जीवन सार्थक हो जाता है। परमात्मा की कृपा से ही हमारी उन्नति और प्रगति का रास्ता खुलता है। अतः हमें उस परमात्मा को हर वक्त याद रखना है।

इस यज्ञ को अध्यापिका सीमा कपूर ने सम्पन्न करवाया। इस अवसर पर अध्यापिका विनती चावला, ज्योति खुराना, सुशील सतीजा, मोनिका वालिया, पूजा दुआ, गुरजीत कौर, भंवरप्रीत, सोनिया, सीमा चौहान, नीतिका, खुशबु, गगनदीप, हरप्रीत, रीतिका, ईशा, गुरप्रीत रीतू, रजनी एनम, साक्षी, कोमल शर्मा, रिंकी, विपिन, हिमांशु, हरदीप और समस्त गैर शिक्षण कर्मचारी उपस्थित थे। यज्ञ समाप्ति पर प्रसाद वितरित किया गया।

डी.ए.वी. शोलापुर में युवती महोत्सव का भव्य आयोजन

डी.ए.वी. कॉलेज शोलापुर के प्रांगण में दो दिन का युवती महोत्सव का बड़ी धूमधाम से आयोजन किया गया। 'सकाळ' समाचार पत्र के संपादक अभय दिवाणजी, सह संपादक किसन दाड़गे और मराठी फिल्म एवं नाट्य ड्रामा क्षेत्र के मशहूर कलाकार अश्विनी तडवळकर ने मुख्य अतिथियों के रूप में दीपक जलाकर कार्यक्रम का शुभारंभ किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रिं. डॉ. विजयकुमार उबाळे जी ने की। इस कार्यक्रम में प्रिं.कॅ.के.ए. पांडे मैडम, प्रि.एस.बी. क्षिरसागर एवं प्रिं. राव

विशिष्ट अतिथि के रुप में उपस्थित थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रि. डॉ. विजयकुमार उबाळे जी ने की। इस कार्यक्रम में प्रि.कॅ. के.ए. पांडे प्रि.एस.बी. क्षिरसागर एवं प्रिं.एम. राव विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे। प्रि. डॉ. उबाळे ने मेहमानों का स्वागत किया।

फैन्सी ड्रैस प्रतियोगिता में लड़कियों ने विभिन्न तरह की रंगारंग प्रस्तुतियाँ दी जिसमें भारत के विभिन्न राज्यों की पोषाक एवं संस्कृति का दर्शन हुआ। समूह नृत्य व लोकनृत्य के समय जो गीत प्रस्तुत हुए उससे उपस्थित अभिभावकों को नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों से अवगत कराया गया। शास्त्रीय नृत्य, महाराष्ट्र का प्रसिद्ध नृत्य लावणी प्रस्तुत करके दर्शकों का खूब मनोरंजन किया। युवतियों की इस प्रस्तुतियों की प्रस्तुति पर उपस्थित मेहमानों ने भारी प्रशंसा की।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 21 जनवरी 2018 से 27 जनवरी 2018

ब्रह्म- क्षात्र की श्री

● **डॉ. रामनाथ वेदालंकार**

इदं मे ब्रह्म च क्षत्र, चोभे श्रियमश्नुताम् ।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां, तस्यै ते स्वाहा।।

यजु ३२.१६

ऋषिः **श्रीकामः**। देवता **देवाः (विद्वांसः राजानश्च)**। छन्दः **अनुष्टुप्** (शङ्क मती)।

● **(मे)** मेरा (इदं) यह **(ब्रह्म च क्षतं च)** ब्रह्मण–धर्म और क्षात्र–धर्म **(उभे)** दोनों **(श्रियं)** श्री को **(अश्नुतां)** प्राप्त हों। **(देवाः)** विद्वद्गण और राजा लोग **(मयि)** मेरे अन्दर **(उत्तमां श्रियं)** उत्तम श्री को **(दधतु)** स्थिर करें। **(तस्यै ते)** उस तुझ [श्री] के लिए **(स्वाहा)** स्वागत–वचन (है)।

● प्रत्येक राष्ट्र में ब्रह्म और क्षत्र दोनों का होना आवश्यक है। कोई भी राष्ट्र ज्ञान–विज्ञान के शिक्षक, आस्तिकता और सच्चरित्रता के प्रचारक, धर्म के उद्धारक ब्राह्मणों से धृत तथा राष्ट्र की रक्षा करनेवाले एवं अवसर आने पर राष्ट्र–हितार्थ अपना बलिदान तक कर देनेवाले वीर क्षत्रियों से रक्षित होता है। इन दोनों में से एक के भी अभाव में राष्ट्र का शरीर खड़ा रह सकना कठिन है। बड़े–बड़े बली और सैन्य–शक्ति में अग्रणी राष्ट्र ब्रह्म–बल के अभाव के कारण अपने शक्ति–प्रदर्शन की धुन में दूसरे राष्ट्रों के साथ युद्ध करके नष्ट–भ्रष्ट हो गये। इसके विपरीत अनेक शान्ति प्रिय और ज्ञान–विज्ञान के उपासक–राष्ट्र आत्म–रक्षा के साधन पास न होने से दूसरे राष्ट्रों द्वारा कवलित कर लिये गये।

राष्ट्र के समान व्यक्ति में भी ब्रह्म अर्थात ज्ञान–विज्ञान, ईश्वर–विश्वास, त्याग, अपरिग्रह आदि का गुण और क्षत्र अर्थात् क्षत से बचने–बचाने का तथा आत्म–रक्षा एवं पर–रक्षा का गुण, दोनों का होना अनिवार्य है। किसी एक के भी न होने पर व्यक्ति में न्यूनता रहती है, जिसके कारण वह उन्नत नहीं हो सकता। अतः मैं भी चाहता हूँ कि मेरे ब्रह्म और क्षत्र दोनों श्री को, उत्कर्ष को, परम शोभा को प्राप्त करें। मेरे राष्ट्र में जो भी देव हैं, धर्मात्मा विद्वद्गण हैं, अध्यापक –उपदेशक हैं, राजा और राज्यधिकारी हैं, वे सदुपदेश, शिक्षा और अपने आदर्श चरित्र के उदाहरण से मेरे अन्दर ब्रह्म और क्षत्र की परम श्री को सुदृढ़ रूप से स्थापित करें। ब्रह्म और क्षत्र के समन्वय से उत्पन्न होने वाली श्री मेरे लिए अतिशय स्पृहणीय है, जीवन के उत्कर्ष के लिए अनिवार्य रूप से वरणीय है। हे ब्रह्म–क्षत्र की श्री! तुम आओ, मेरे अन्तरात्मा में प्रवेश करो, तुम्हारा स्वागत है। ❑

वेद मंजरी से

बोध कथाएँ

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

स्वामी जी ने 'ईर्ष्या और वैर की अग्नि बुझाओ' पर कथा सुनाते हुए बताया गायत्री की उपासना यदि करनी है, तो मन से घृणा को निकाल दो। ईर्ष्या और वैर की भावना को दूर निकाल दो तो फिर देखो, आनन्द और सुख मिलता है या नहीं? 'करुँ मैं दुश्मनी किससे?' पर कहा तुमने स्वयं ही तो ईर्ष्या और घृणा की अग्नि दहका रखी है। बुझा दो इसे! जी अवश्य लग जाएगा। 'जैसा अन्न, वैसा मन' पर कहा कि व्यक्ति पाप–भरा अन्न खाता है तो उसके शरीर में पाप समा जाता है, रक्त बनकर नसों में दौड़ता है। इसलिए चाहते हुए भी वह धर्म की बात नहीं कह सकता।

–आगे पढ़ेंगे तीन लघु कथाएँ

जैसा आहार, वैसा विचार

एक साधु रहता था किसी जंगल में। कितने ही लोग उसके दर्शन करने को आते। जो भी जाता, उसे शान्ति मिलती। एक दिन उस देश के राजा भी गए। देखा, साधु एक वृक्ष के नीचे बैठे हैं। सर्दी और वर्षा से बचने का कोई प्रबन्ध नहीं है।

राजा ने कहा– "महात्मन्! यहाँ तो बहुत कष्ट होता होगा, आप मेरे साथ चलिए, महल में रहिए।"

साधु पहले तो माना नहीं, राजा ने बहुत आग्रह किया तो बोले– "अच्छा चलो!"

महल में गए। एक सुन्दर कमरे में ठहरे। हर समय नौकर उपस्थित रहने लगे। अच्छा भोजन मिलने लगा। तीन मास व्यतीत हो गए। राजा उसकी पूजा करते। रानी उसमें श्रद्धा रखती। एक दिन रानी नहाने के लिए स्नानागार में गई। नहाकर उठी तो वह हीरों का हार पहनना भूल गई, जो उसे उतारकर स्नानागार में रख दिया था। हार वहीं पड़ा रहा। रानी के पश्चात् साधु स्नानागार में गया। हार को देखा, उठाकर अपने कोपीन में छुपा लिया। स्नानागार से निकले, महल से बाहर चले गए।

कुछ देर पश्चात् रानी को हार का ध्यान आया। दासी से बोली– "स्नानागार में हार छोड़ आई हूँ, उसे ले आओ।" परन्तु वहाँ तो हार नहीं था। खोज होने लगी। पूछा गया– गुसलखाने में रानी के पश्चात् कौन गया था? पता लगा कि महात्मा गए थे। महात्मा की खोज होने लगी। महात्मा मिले नहीं। राजा को ज्ञात हुआ तो उसने सिपाहियों को आज्ञा दी– "उस साधु के पीछे जाओ। उसे पकड़कर ले आओ।"

इधर वे महात्मा शहर से बाहर निकले। जंगल में चले गए। दिन–भर चलते रहे। पाँव थक गए। भूख भी सताने लगी तो जंगल का एक फल तोड़कर खा गए; फल था एक औषधि, उससे दस्त लग गए। इतने दस्त आए कि महात्मा निर्बल हो गए। तभी उन्हें हार का ध्यान आया। उसे देखते ही बोले– "मैं इसे क्यों उठा लाया? मैंने चोरी क्यों की?"

उसी समय वापस चल पड़े। आधी रात के समय राजा के महल पर पहुँचे। आवाज़ दी। राजा जागे। महात्मा ने उसके पास जाकर कहा– "राजन्! आपका यह हार है, ले लो। मैं यहाँ से उठाकर ले गया था। मुझसे अपराध हुआ। मैं क्षमा माँगने आया हूँ।"

राजा ने आश्चर्य से कहा– "वापस ही लाना था, तो आप इसे ले क्यों गये थे।"

साधु ने कहा– "राजन्! क्रोध न करना, तीन मास तक मैं तुम्हारा अन्न खाता रहा, उससे मेरा मन पापी हो गया। जंगल में जाकर दस्त आए। शरीर शुद्ध हो गया। तेरे अन्न का प्रभाव समाप्त हो गया। मैंने वास्तविकता को जाना और वापस आ गया।"

यह है अन्न का प्रभाव! इसीलिए यूनान के फ़िलॉसफ़र पैथागोरस ने कहा था– "तुम मुझे बताओ, कौन आदमी क्या खाता है, मैं तुम्हें बताऊँगा कि वह क्या सोचता है!"

इसीलिए कहते हैं कि जैसा अन्न खाओगे, वैसा मन बनेगा। जो व्यक्ति गन्दा और खोटा अन्न खाता है, तो उसका मन कभी अच्छा होगा नहीं। अन्न को जिस भावना से कमाया हो और तैयार किया हो, सबका प्रभाव मन पर पडता है।

पाप के अन्न का दुष्परिणाम

पूज्य महात्मा हंसराज जी एक बार हरिद्वार के मोहन आश्रम में ठहरे हुए थे। एक वानप्रस्थी उनके पास ही एक कमरे में रहता था। एक दिन वानप्रस्थी सीधा महात्माजी के पास आया और ज़ोर–ज़ोर से रोने लगा। महात्माजी ने पूछा– "क्या हुआ आपको?"

वह बोला– "मैं लुट गया, महात्माजी! मेरी उम्र–भर की कमाई नष्ट हो गई!"

महात्माजी बहुत घबराए। पूछने पर पता लगा कि वह वानप्रस्थी पिछले कई वर्षों से ईश्वर–भक्ति के मार्ग पर चलता हुआ ध्यान और उपासना की सीढ़ी तक पहुँच चुका था। रात्रि के समय अपने कमरे में बैठ जाता है वह। भगवान् का

शेष पृष्ठ 03 पर ☞

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता

● भद्रसेन

शब्द प्रयोग– धर्मनिरपेक्ष शब्द भारत की स्वाधीनता [15 अगस्त 1947] के पश्चात् विशेष रूप से प्रयुक्त हो रहा है। अब तो 1975 के विशेष काल से भारतीय संविधान की भूमिका में धर्म या पन्थनिरपेक्ष के रूप में आया है। अतः धर्मनिरपेक्ष एक विशेष प्रकार का पारिभाषिक, शास्त्रीय शब्द है। प्रत्येक भाषा में ऐसे विशेष शब्द होते हैं। जो विशेष क्षेत्र, शाखा, शास्त्र, स्थिति में वर्ते जाते हैं। जैसे गुण, धातु [या मुहावरे]।

ये व्याकरण भौतिकशास्त्र और आयुर्वेद में अलग–अलग अर्थ रखते हैं। अतः धर्मनिरपेक्ष एक विशेष शब्द है।

शब्दार्थ– धर्म निरपेक्ष शब्द का विशेष अर्थ है। भारतीय संविधान के अनुसार चलने वाले विधान (पालिका), प्रशासन (कार्यपालिका) और न्यायपालिका के सभी कार्यों में प्रचलित किसी [हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई आदि] धर्म को अपेक्षित= बीच में रखकर, विशेष मान कर कोई कार्य, भेदभाव, अधिकार, अवसर नहीं होगा। अपितु सभी नागरिकों से सरकार को सुरक्षा, सन्देश–संचार, यातायात, उद्योग, कार्यालय आदि में समान व्यवहार किया जाएगा। केवल योग्यता, अनुभव, शिक्षा के आधार पर ही किसी कार्य, पद पर किसी का निर्वाचन होगा। अर्थात् निर्दिष्ट तीनों क्षेत्रों में भारत के सभी नागरिकों से समान व्यवहार करेगा। सभी को समान अवसर दिया जाएगा। इसके साथ दूसरों के जीवन में बाधा डाले बिना सभी को अपने–अपने धर्म को मानने, पालने, अपने धर्मस्थल–संगठन बनाने और अपने धर्म के प्रचार की पूरी स्वतंत्रता होगी।

वस्तुतः धर्मनिरपेक्षता की मूलभावना यही है, कि सभी नागरिकों को समान अवसर और एक सा व्यवहार प्राप्त हो। इस दृष्टि से भारतीय संविधान की प्रस्तावना के मूलशब्द हैं–

'हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व–लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उस के समस्त नागरिकों को सामाजिक–आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प हों।'

इस प्रस्तावना के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है, कि भारतीय संविधान में प्रयुक्त 'धर्मनिरपेक्षता' 'धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता' में विरोध नहीं है। जब कहीं धर्म के साथ अनिवार्य शब्द का प्रयोग किया जाता है। तो ऐसी स्थिति में धर्म के आचरणात्मक पक्ष को सामने रखा जाता है। क्योंकि स्नेह, दया, ईमानदारी धर्म के ऐसे मूलतत्त्व हैं। जिनसे किसी को भी मतभेद नहीं है और ये सभी धर्मों में समान रूप से मान्य हैं। तभी तो कहा जाता है– 'दया धर्म का मूल है'; 'जहाँ दया–तहाँ धर्म है'; 'परहित सरिस धर्म नहीं भाई'; 'सरवत दा भला' धर्म के आचरणात्मक पक्ष के सम्बन्ध में सभी समान रूप से सहमत हैं। अतः आचरण रूपी धर्म सभी के लिए अनिवार्य है। इसके बिना किसी व्यक्ति, परिवार, समाज का व्यवहार न तो चल सकता है और न ही वह सुखी हो सकता है।

दोनों की स्थिति– जब किसी धर्मनिरपेक्षता और धर्मस्वतन्त्रता की बात होती है, तो वहाँ धर्म का अर्थ कर्मकाण्ड [पूजा–पाठ आदि] और हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म, आदि से होता है। अतः आज कल प्रचलित धर्मनिरपेक्षता तथा धर्मस्वतन्त्रता शब्द कर्मकाण्ड और हिन्दूधर्म आदि की दृष्टि से ही है। जिसमें सबको अपने–अपने ढंग से पूजा आदि करने की स्वतन्त्रता है। जैसे कि कोई किसी विशेष स्थान [तीर्थ] पर स्नान, यात्रा करना चाहता है। कोई किसी विशेष धर्मस्थल पर अभीष्ट के दर्शनार्थ, पूजनार्थ जाना चाहता है। किसी विशेष धर्मग्रन्थ को विशेष विधि से पढ़ना पसन्द करता है। किसी सत्संग में सम्मिलित होने की इच्छा रखता है। ये ऐसी बातें हैं, जिनके सम्बन्ध में हर व्यक्ति, वर्ग अपने–अपने दृष्टिकोण, विचार के भेद से स्वतन्त्र है। इसी प्रकार के पूजा–पाठ, जप–तप, स्मरण–ध्यान, देवदर्शन, तीर्थयात्रा, विशेष चिह्नधारण आदि कर्मकाण्ड की ही दृष्टि से भारतीय संविधान में धर्म की स्वतन्त्रता है। सभी भारतीयों को अपनी–अपनी इच्छा के अनुसार समान अधिकार दिया गया है।

ऐसा क्यों– आज स्वाधीन भारत में लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था है। जो जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता का राज्य है। भारत के नागरिक धर्म, भाषा, प्रदेश, जाति [वर्ण–वर्ग–बिरादरी], राजनीति, कारोबार की दृष्टि से अनेक रूपों में विभाजित हैं। इन–इन भेदों के कारण जनता परस्पर भिन्न–भिन्न तरह के रीति–रिवाज, खान–पान, वेश–भूषा, चिन्ह–प्रतीक आदि रखती है। लोकतन्त्र अर्थात लोगों की अपनी इच्छा, भावना, आशा के बिना इनको किसी भी एक स्थिति, रूप, नियम, व्यवस्था वाला करने से विद्रोह, द्वेष, वैमनस्य, अराजकता ही उभर सकती है।

प्राचीन काल के शास्त्रों में भी कर्मकाण्ड की दृष्टि से स्वतन्त्रता थी। तभी तो योग में ध्यान के और यज्ञ [पूजा] के अनेक विधान हैं।

धर्म शब्द का अर्थ– जो धारण, पालन किया जाए या जिससे कोई टिका रहे, वह धर्म है। जब यह कहा जाता है, कि जल का धर्म, अग्नि का धर्म। तब उसका अर्थ होता है– **स्वभाव**। अर्थात भौतिक पदार्थों के साथ जब धर्मशब्द का प्रयोग होता है, तो वहाँ सब जगह स्वभाव ही उसका अर्थ होता है। मूलतः धर्म शद का पहले–पहले प्रयोग प्राकृत पदार्थों, व्यवस्थाओं के आधार पर ही हुआ। जोकि सबके लिए एक ही होती है। इसीलिए कहा जाता है, कि धर्म तो सबका एक ही है।

2– जब यह कहा जाता है– माता–पिता का धर्म है, बच्चों का पालन करना। बच्चों का धर्म है– माता–पिता की सेवा करना, आज्ञा मानना– यहाँ धर्म का अर्थ है– **कर्तव्य**।

3– धर्मस्थल, धर्मग्रन्थ आदि में धर्म शब्द कर्मकाण्ड की ओर संकेत करता है।

4– धर्मपत्नी में आया धर्म शब्द सच्चा–सुच्चा होने का इशारा करता है। अर्थात सम्बन्धों की पवित्रता। इस प्रकार धर्म शब्द अनेक अर्थों में आता है। ये सारे अर्थ उस–उस क्षेत्र की व्यवस्थाएँ हैं। जैसे कि बोलने की व्यवस्था, सम्बन्धों को निभाने की परम्परा, समाज में बर्ताव की व्यवस्था। अतः धर्म शब्द का कोई एक अर्थ हो सकता है, तो वह व्यवस्था ही है। हर क्षेत्र की व्यवस्था अपनी–अपनी होती है।

धर्म–सम्प्रदाय–पन्थ– यह कहना, कि धर्म केवल एक ही है, शेष मजहब, सम्प्रदाय, पन्थ, मत हैं। यह उचित नहीं है, क्योंकि भाषा और उसके शब्द– अर्थ लोकव्यवहार पर चलते हैं। भाषा अपने बोलने वालों पर निर्भर होती है। आज हिन्दू धर्म, ईसाई धर्म, मुस्लिम धर्म, बौद्ध धर्म आदि इस–इस रूप में प्रचलित हो गए हैं। सभी अपने आप को धर्म कहलाना चाहते हैं। जब कोई किसी से पूछता है? आप का धर्म क्या है? तब सभी का उत्तर प्रचलित वाला ही होता है।

182– शालीमार नगर, होशियारपुर 146001

☞ पृष्ठ 02 का शेष

बोध कथाएँ...

ध्यान करता, ईश्वर की शीतल ज्योति उसे दिखाई देती। उसमें आनन्द से मस्त होकर वह घंटों बैठा रहता। परन्तु कल रात उसके साथ एक अद्भुत घटना घटी। रोते हुए उसने कहा– "मैं ध्यान में बैठा महात्माजी, तो ऐसा प्रतीत हुआ कि रोशनी में लाल दुपट्टे वाली एक नौजवान लड़की खड़ी है। मैंने घबराकर आँखें खोल दीं। समझा, कुछ भूल हो गई।– फिर व्यायाम किया, फिर ध्यान से ज्योति को देखा, परन्तु वह लड़की अब भी वहीं थी। मैं उसे जानता नहीं, परन्तु बार–बार मेरे पास आकर खड़ी हो जाती है। मैंने बार–बार मुँह–हाथ धोकर प्राणायाम करने का प्रयत्न किया है। बार–बार उसे हटाने का प्रयत्न किया है, परन्तु रोशनी में उसके अतिरिक्त कुछ मुझे दिखाई नहीं देता। मेरी तो उम्र–भर की कमाई लुट गई है! मैं तो कहीं का न रहा! पता नहीं मुझे क्या हो गया?" वह कहता जाता था और रोता जाता था।

महात्माजी ने पूछा– "किसी बुरे व्यक्ति की संगत में तो नहीं बैठे? कोई बुरी पुस्तक तो नहीं पढ़ी?"

उसने कहा– "ऐसा कुछ नहीं किया मैंने।"

महात्माजी ने कहा– "कल तुम आश्रम से बाहर तो गए होगे?"

वह बोला– "गया था, एक भण्डारे में। एक सेठ साहब आए हैं। उन्होंने भण्डारा किया था, वहाँ खाने गया था।"

महात्माजी ने कहा– "जाकर पता लगाओ– वह सेठ कौन है और उसने भण्डारा क्यों किया था?"

वानप्रस्थी गया। पता लगाकर उसने बताया कि सेठ एक शहर का रहने वाला है। वहाँ उसने अपनी नौजवान बेटी को एक बूढ़े के पास दस हज़ार रुपये में बेच दिया था। दो हज़ार रुपया लेकर वह हरिद्वार आया है कि पाप का प्रायश्चित करने के लिए भण्डारा कर दे।

महात्मा जी ने इस बात को सुनकर कहा– "यही वह नौजवान लड़की है, जो तुम्हें दिखाई देती है। तुमने जो कुछ खाया वह पुण्य भाव से दिया हुआ दान नहीं था, पाप की कमाई का एक भाग है– उस हतभाग्य लड़की का मूल्य। जब तक वह अन्न तुम्हारे शरीर से नहीं निकलेगा, तब तक उस दुःखी लड़की का दिखाई देना बन्द न होगा।"

यह है पाप का अन्न खाने का परिणाम! इससे आत्मा गिरती है। आगे बढ़ता हुआ मनुष्य पीछे गिरता है।

पकानेवाले का दुष्प्रभाव

रणवीर था फाँसी की कोठरी में। मैं उसे प्रतिदिन उपनिषद् पढ़ाने जाता था। वह उपनिषदों का पाठ करता था। गायत्री मंत्र का जाप करता था। फाँसी की कोठरी में वह हर समय हँसता रहता था। परन्तु एक दिन मैंने उसे बहुत उदास देखा; पूछा– "तू आज उदास क्यों है?"

उसने कहा– "कल से बार–बार एक भयानक चित्र मेरे सामने आता है। मैंने ऐसी बात स्वप्न में भी सोची नहीं, परन्तु अब इस बात के अतिरिक्त कोई दूसरी बात जाप करते समय भी दिखाई नहीं देती। मैं तो दुःखी हो गया हूँ। समझ में नही आता कि क्या हो गया है मुझे?"

मैंने पूछा– "क्या दिखाई देता है तुझे?"

रणवीर ने कहा– "आप तो जानते ही

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

महर्षि दयानन्द सरस्वती की तपोभूमि छलेसर एक ऐतिहासिक धरोहर

● डॉ जयसिंह 'सरोज'

गाँव छलेसर, जहाँ सन् 1870 में महर्षि दयानन्द सरस्वती के कर कमलों द्वारा स्थापित यज्ञ वेदी एवं संस्कृत पाठशाला के भग्नावशेष आज भी महर्षि की गौरव गाथा संजोई धरोहर के रूप में विद्यमान हैं, अलीगढ़ से 21 किमी. तथा सुप्रसिद्ध सर्वदानन्द गुरुकुल साधु आश्रम से 6 किमी. की दूरी पर आम के सुन्दर बगीचों के मध्य शस्य श्यामला माटी पर पक्के रास्ते पर बसा है।

अलीगढ़ विरासत के सुप्रसिद्ध राजा श्री बलवन्त सिंह संस्थापक राजा बलवन्त सिंह कॉलेज आगरा, जिन पर ऋषिवर के विचारों का गहरा प्रभाव था, की ससुराल इसी गाँव में थी। इनकी धर्मपत्नी रानी श्रीमती वेसती जू, अपने हवलदार डॉ. तालेवर सिंह तथा राजपरिवार के सुप्रसिद्ध पहलवान रतीराम, जो बाद में ऋषिवर का अनन्य भक्त बन गया था, के साथ महर्षि के दशर्नार्थ कर्णवास (बुलन्दशहर) आयी थी तथा महर्षि से गायत्री मंत्र की दीक्षा ली थी। इन्हीं के परिवार के रईस जमींदार ठा. मुकुन्द सिंह स्वामी जी के पूर्ण समर्पित भक्त थे।

इसी पावन धरा पर स्वामी दयानन्द सरस्वती अनेक बार पधारे तथा नित्य यज्ञ, वृहद यज्ञ, शास्त्रार्थ एवं वेदोक्त उपदेश दिए। अब भी इस स्थल पर यदा-कदा यज्ञ के कार्यक्रम चलते रहते हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती की कहानी ठा. मुकुन्द सिंह की जुबानी—

ठा. मुकुन्द सिंह एक सज्जन प्रवृत्ति के विचारवान पौराणिक व्यक्ति थे।स्वामी दयानन्द सरस्वती ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष स. 1925 तदनुसार मई सन् 1868 व, कार्तिक स. 1925 तदनुसार अक्टूबर, 1868 के मध्य कर्णवास (बुलन्द शहर) में प्रवास कर रहे थे। उनके वैदिक उपदेशों एवं तात्कालिक पौराणिक विद्वान पं. अम्बादत्त पर्वती, पं. हीरावल्लभ के शास्त्रार्थ में पराजय व मूर्तियों के गंगा नदी में प्रवाह की चर्चाएँ चतुर्दिक गाँव-गाँव में जोरों पर थीं। इन्हें सुनकर जिज्ञासु ठाकुर साहब कर्णवास गए। शरीर पर गंगारज लगाए, कोपीनधारी, बाल ब्रह्मचारी अवधूत के दर्शन किए। स्वामी जी के सारगर्भित, तार्किक, विज्ञानपरक उपदेशों को सुनने का इन्हें मात्र दो घंटे का ही शुभअवसर प्राप्त हुआ परन्तु इस क्षणिक मुलाकात ने इनका हृदय परिवर्तन कर दिया। इन्हें मूर्ति पूजा से घृणा हो गयी। अपने गाँव वापिस आए और 30 स्थानों पर स्थापित पथवारी देवता, चामुण्डा देवता, महादेव, नगरसेन देवता, लागर देवता, सैय्यद देवता आदि की मूर्तियाँ एकत्रित कराकर कालिन्दी (काली) नदी में प्रवाहित कर दी। इनके उस कृत्य से क्षेत्र में भूचाल सा आ गया तथा इनकी विरादरी के 60 गाँव के चौहानों ने ही नहीं बल्कि अन्य ब्राह्मण, वैश्य, लोधीराजपूत आदि जातियों ने इनका समाज से बहिष्कार कर दिया। इससे ये किंचित भी न घबराए और नहीं ही विचलित हुए तथा ऋषिवर के कट्टर अनुयायी बने रहे।

छलेसर में स्वामी दयानन्द सरस्वती का प्रथमबार आगमन—

इनकी हार्दिक अभिलाषा थी कि महर्षि इनकी जमींदारी के गाँव छलेसर एक बार अवश्य आएँ। इसी अभिलाषा को हृदय में संजोए ये स्वामी जी से मिलने सोरों (कासगंज) गए। जब इन्हें पता चला कि ऋषिवर कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी स. 1927 (सन 1870) को रामघाट आ रहे हैं, ये रामघाट पहुँचे तथा स्वामी जी से छलेसर पहुँचने का आग्रह किया। स्वामी जी ने तत्क्षण इनके निवेदन को स्वीकार कर लिया।

स्वामी जी मार्गशीर्ष वदी चतुर्थी स. 1927 अर्थात् 12 नवम्बर, सन् 1870 दिन शुक्रवार को छलेसर के लिए प्रस्थान किया। स्वामी जी के आने का समाचार हवा की तरह चारों ओर फैल गया। ठाकुर सहाब, इनके भाई मुन्ना सिंह, ठा. भोलासिंह आदि के हर्षोल्लास का तो ठिकाना न था। हर व्यक्ति अपने को गौरवान्वित महसूस कर रहा था। ये ढाई सौ व्यक्तियों के साथ नंगें पैर काली के तट पर, जहाँ स्वामी जी पहुँच रहे थे, पहले ही पहुँच गए। सभी ने स्वामी जी के चरण स्पर्शकर आशीर्वाद लिया तथा इन्होंने पुष्पाहार गले में डालकर चरण स्पर्श पर आशीर्वाद लिया। इनके द्वारा यथायोग्य सम्मान एवं सत्कार हेतु छत्र एवं पालकी का प्रबन्ध था। परन्तु स्वामी जी ने सबके साथ पैदल ही चलकर छलेसर जाने का निश्चय किया। छलेसर पहुँचकर स्वामी जी आम की वाटिका में ठहरकर इस क्षेत्र के धुरन्धर कहे जाने वाली पौराणिक विद्वान पं. दुर्वासा,. पं. हरिकृष्ण गोपालपुर, अतरौली के इस्लाम के विद्वान काजी इम्दाद अली आदि अनेकानेक व्यक्तियों ने स्वामी जी के साथ शास्त्रार्थ एवं शकां समाधान किया और अन्ततोगत्वा स्वाजी जी के प्रवचनों को 400-500 व्यक्ति नित्य सुनने आते थे। ऐसा लगता था मानो छलेसर में धर्म के कुम्भ का मेला लगा हो।

स्वामी जी ने छलेसर में यज्ञ वेदी एवं संस्कृत पाठशाला की स्थापना की। इसी यज्ञ वेदी में स्वामी जी नित्य यज्ञ करते थे। स्वामीजी ने इन्हें इनके भाई मुन्ना सिंह, ठा. भोलासिंह को यज्ञोपवीत धारण कराया। पाठशाला के मुख्यअध्यापक घौरऊ निवासी वैदिक विद्वान एवं व्याकरणाचार्य कुमरसेन थे।

स्वामी जी का दूसरी बार छलेसर में पर्दापण—

स्वामी जी दूसरी बार अपने शिष्य खेमकरन के साथ पौष सुदी स. 1930 अर्थात् 20 सितम्बर सन् 1873 को छलेसर, पधारे तथा संस्कृत पाठशाला में रुके। स्वामी जी को सुनने असंख्य लोग नित्यप्रति आते थे। यहाँ महोत्सव जैसा दृश्य दृष्टिगोचर होता था।

राजा जयकिशन दास सी एसआई डिप्टी कलक्टर अलीगढ़ की स्वामी जी से भेंट—

इस सयम तक स्वामी जी की विद्वता की ख्याति चारों ओर फैल चुकी थी। हर बुद्धिजीवी उनसे सम्पर्क करने के लिए उत्सुक था। राजा जयकिशन दास ने भी जब स्वामी के सम्बन्ध मे सुना तो उन्होंने इनसे (ठा. मुकुन्द सिंह से) स्वामी जी के छलेसर पधारने पर दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। ठाकुर सहाब ने स्वामी जी से अलीगढ़ पधारने का अनुरोध किया जिसे ऋषिवर ने स्वीकार कर लिया। स्वामी जी दिनांक 26 दिसम्बर 1873 को हाथी की सवारी से अलीगढ़ पधारे उनके साथ 25 घुड़सवार भी थे, जिसमें ठा. मुकुन्द सिंह, मन्ना सिंह, भोलासिंह प्रमुख थे, जो स्वामी जी के साथ रहे। यहाँ स्वामी जी अंचल ताल के पास चाऊलाल की आम की वाटिका वर्तमान में सुनाहरों नाली गली में ठहरे तथा नित्य वेदानुकूल उपदेश दिए। यहाँ स्वामी जी से अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के संस्थापक पर सैय्यद अहमद खाँ भी दर्शनार्थ आए।

बहुत कम लोग जानते है कि राजा जयकिशन दास जी ने स्वामी जी से दिए जा रहे उपदेशों को लेखबद्ध करने का अनुरोध किया। महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित अमर ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रकाशन सन् 1875 में स्वयं राजा जी ने अपने धन से कराया। अलीगढ़ से स्वामी जी 22 जनवरी सन् 1874 को हाथरस को प्रस्थान कर गए।

तीसरी बार स्वामी जी का छलेसर आगमन—

स्वामी जी तीसरी बार 04.12. 1876 को अतरौली रेलवे स्टेशन पहुँचे। उनके साथ 5-6 व्यक्ति थे। वहाँ से स्वामी जी सीधे छलेसर आए तथा लगभग एक सप्ताह रुके। इस बार भी स्वामी जी नित्य यज्ञ एवं उपदेश देते थे तथा बड़ी संख्या में लोग उनके व्याख्यान सुनने आते थे। लाल लिटन वायसराय ने महारानी विक्टोरिया को पूर्ण सम्राज्ञी का दर्जा दिलाने के लिए दिल्ली में एक कार्यक्रम का आयोजन किया, जिसमें राजाओं जमींदारों तथा धर्माचार्यों को आमन्त्रित किया। स्वामी जी छलेसर से सीधे ठा. मुकुन्द सिंह आदि के साथ दिल्ली चले गए। ठाकुर साहाब अपने साथ शामियाना, डेरा, दरियों तथा अन्य सामान लेकर गए। इस कार्यक्रम में सर सैय्यद अहमद खाँ, राजा किशन दास, कुवर सैन आदि भी स्वामी के साथ थे। पौराणिकों के व्यवधान के कारण स्वाजी जी "स्वराज्य" एवं "सुराज्य" अवधारणा को पंचायत में प्रस्तुत कर सफल न हो सके।

हृदयाञ्चल से—

छलेसर की यह पावन माटी, जहाँ 147 वर्ष पुरानी ऋषिवर द्वारा स्थापित यज्ञ वेदी व संस्कृत पाठशाला के भग्नावशेष आज भी स्वामी जी जी याद को ताजा कर रहे हैं। गंगा की भाँति आर्यों की पवित्र तीर्थ स्थली है। स्थानीय आर्यजनों के अनेकानेक प्रयत्नों के बावजूद यह स्थल यथावत पड़ा है।

वर्ष 1916-1917 में पुनः इस स्थल को ऐतिहासिक बनाने के लिए डॉ. जयसिंह 'सरोज' पूर्व उप प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. प. देवनारायण भारद्वाज, बाबू सिंह आर्य, इंजि. लटूरी सिंह, के.एस. आर्य एवं गाँव के बुद्धिजीवी लोगों के सद्प्रयत्नों से, गाँव की प्रधान श्रीमती सुरजेश सैनी धर्मपत्नी श्री कालीचरण सिंह ने दिनांक 10.11.2016 को सर्वसम्मति से "महर्षि दयानन्द सरस्वती तपोभूमि" के नाम से प्रस्ताव पारित कराया।

प्रस्तावानुसार दिनांक 23.10.2017 सोमवार को इस पवित्र स्थल पर शिलान्यास सम्पन्न हुआ, जिसमें डॉ. जयसिंह 'सरोज', इंजि. लटूरी सिंह, सर्वदानन्द गुरुकुल साधु आश्रम के प्राचार्य श्री जीवन सिंह, आचार्य विक्रमी सिंह, भूदेव आर्य, प्रधाना के पति श्री काली चरणसिंह, डा. अभयकुमार सिंह, ठा. रघुराज सिंह, योगेन्द्र सिंह, मोहन सिंह, सत्यप्रकाश सिंह, अमरदीप सिंह, देवेन्द्र सिंह, श्रीपाल सिंह, ढाल सिंह, उदयपाल सिंह आदि मौजूद थे। इस तपोभूमि की चारदीवारी लगभग चार लाख रुपये व्यय कर पंचायत ने बनवा दी है। इसे भव्यता प्रदान करने का उत्तरदायित्व हम सबका है। यहाँ डी.ए.वी. जैसे कॉलेज, महर्षि दयानन्द सरस्वती कीर्ति स्तम्भ, यज्ञ वेदी पर भव्य यज्ञशाला आदि का निर्माण हो सकता है। आइये हम सब बन्धु एवं मातृशक्ति इस पुण्य कार्य में अपनी-अपनी आहुति प्रदान कर इसे ऐतिहासिक धरोहर के रूप में विकसित करने संकल्प लें।

48, एच. आई. जी.
अवन्तिका, फेज-1
रामघाट रोड, अलीगढ़, उ. प्र.

गतांक से आगे...

कोरी कल्पना है– 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या'

● रामनिवास 'गुण ग्राहक'

सब जानते हैं कि जो सच होता है, वह प्रत्येक रूप में हर दृष्टि से सच ही होता है। दूसरी ओर जो झूठ होता है, वह हर दृष्टि और हर रूप में झूठ होता है। 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' की कल्पना को जिस दृष्टि से देखो, जिस पक्ष से परखो, झूठ का पुलिन्दा ही सिद्ध होगी। इसमें एक आश्चर्यजनक विसंगति पर अचानक अभी कुछ दिनों पूर्व सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय के समय मेरा ध्यान गया। वैसे तो– 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' तथा उसके पोषक वाक्य– 'एकोऽहं बहुस्याम' वाक्य की निःसारता तथ्य व तर्क पूर्ण ढंग से हम कर चुके हैं, लेकिन व्यावहारिक स्तर पर विचार करें तो– 'एकोऽहं बहुस्याम' वाक्य अव्यावहारिक प्रतीत होता है। देखा जाता है कि संसार का प्रत्येक मनुष्य आज जिस स्थिति में हैं, उससे आगे बढ़ने व ऊँचा उठने का ही प्रयास करता है। ज्ञान, शक्ति व गुण सम्बन्धी उत्कृष्टता को पाने के प्रयास में संसार का प्रत्येक व्यक्ति निरन्तर लगा रहता है। यह एक अलग बात है कि वह अज्ञानतावश या काम–क्रोध, लोभ–मोह व राग–द्वेष जैसे भावावेश के प्रवाह में पड़कर पतनगामी प्रवृत्तियों का शिकार होकर उन्नति के स्थान पर अवनति के गड्ढे में गिरता हुआ देखा गया है। आश्चर्य इस बात का है ज्ञान–बल व सामर्थ्य की दृष्टि से पूर्ण होने पर भी पूर्णकाम ब्रह्म भला अल्पज्ञ जीव और जड़ जगत् होने की इच्छा क्यों करता है? उसके लिए क्या अप्राप्त है या यूँ कहें कि उसके अतिरिक्त जब कुछ है ही नहीं तो वह बहुत होने के नाम पर अल्पज्ञ जीव और मिथ्या–जड़ जगत् होने की अव्यावहारिक इच्छा क्यों करता है? अल्पज्ञ जीव बनकर उसमें यह सद्बुद्धि कैसे आ जाती है कि एक छोटा सा अधिकारी बनने के बाद वह चपरासी बनने की इच्छा नहीं करता, प्रत्युत बड़ा अधिकारी बनने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा देता है। कितने दुःख और दुर्भाग्य की बात है कि स्वार्थ के पचड़े में पड़कर पण्डित कहलवाने वालों ने सब सद्गुणों में सदा सर्वोपरि ब्रह्म को अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्य वाला जीव और मिथ्या जड़ जगत् बनने की इच्छा करने वाला बताकर सामान्य अल्पज्ञ मानव में भी निम्न स्तर का बना डाला। कितनी अटपटी कल्पना और चटपटी गप्प है कि सत्यकाम, सत्य स्वभाव एवं पूर्णकाम ब्रह्म अल्पज्ञ–अल्प सामर्थ्य वाला जीव और मिथ्या व जड़ जगत् बनने की कामना करता है और बन जाता है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार–

'वाच्यावाच्यं प्रकुपितो न विजानाति कर्हिचित्।
न अकार्यमस्ति क्रुद्धस्य न अवाच्यं विद्यते क्वचित्।।' सुन्दरकाण्ड 16.5

अर्थात् क्रोधी व्यक्ति को यह विवेक नहीं रहता कि क्या कहना है, क्या नहीं कहना। क्रोधी के लिए न करने योग्य तथा न बोलने योग्य कुछ भी नहीं रहता, यानि क्रोधी व्यक्ति कुछ भी कर सकता है औ कुछ कह सकता है। महर्षि वाल्मीकि का यह कथन एकदम सत्य और सटीक है, लेकिन लगता है लालच और स्वार्थ में अन्धा (विवेक शून्य) होकर विद्याविलासी व्यक्ति भी पागलों के समान प्रलाप करते हुए वह भी कर सकता है जो क्रोध नहीं कर सकता। चाहे कोई कितना ही क्रोधावेश में हो वह उस आवेश में इतना मर्खूतापूर्ण लेखन नहीं कर सकता।

'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' का नारा लगाने वालों से एक प्रश्न और पूछने की अभी–अभी (लिखते समय ही) इच्छा हुई है। समस्त वैदिक साहित्य और आर्ष ग्रन्थों में इस सृष्टि को प्रवाह से अनादि स्वीकार किया है, अर्थात् सृष्टि का बनना और इसका प्रलय होना प्रवाह से अनादि है। इसके बनने से पूर्व प्रलय थी और इसके बाद प्रलय होगी। उस प्रलय के बाद पुनः सृष्टि होगी और उस सृष्टि के बाद पुनः प्रलय। इस सृष्टि के बनने और प्रलय होने का न तो पूर्व काल में कोई अन्तिम सिरा मिलता है और न आगे के लिए यह कहा जा सकता है कि 10–20 या 50–100 अथवा करोड़ों बार सृष्टि बनने के बाद सृष्टि बनने और प्रलय होने का क्रम चला आ रहा है और आगे अनन्तकाल तक यह चलता रहेगा। यह सत्य सिद्धान्त वेद और वैदिक साहित्य से जुड़े हुए सब लोग मानते हैं। यह मान लेने पर– 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' कहने वालों के सामने प्रश्न खड़ा होता है कि क्या ब्रह्म प्रत्येक कल्प में सृष्टि रचना के लिए– 'एकोऽहं बहु स्याम' वाला तरीका अपनाता है या इस कल्प में ही यह नया प्रयोग किया है? वेद तो यह घोषणा करता है कि परमात्मा ने जैसे पूर्व कल्पों में सृष्टि– सूर्य, चन्द्र, विद्युत, पृथ्वी और अन्तरिक्ष आदि की रचना की थी, वैसी ही रचना इस कल्प में की है और आगे के कल्पों में भी ऐसी ही रचना करेगा। (सूर्याचन्द्रमसौधाता यथा पूर्वमकल्पयत्– ऋ.10.110.3)। इस वेद वचन के आलोक में– 'एकोऽहं बहु स्याम' को देखे तो मानेगा पड़ेगा कि ब्रह्म प्रत्येक सृष्टि को बनाने से पहले ऐसा ही करता होगा। 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या– 'एकोऽहं बहु स्याम' की सत्याता तो पाठक पिछले पृष्ठों में देख ही चुके हैं कि यह शंकरवादियों का एक मिथ्या प्रपञ्च है, कोरी कपोल कल्पना है। शंकराचार्य से पूर्व किसी ऋषि–महर्षि ने इनकी चर्चा तक नहीं की।

इन सबसे हटकर हम इसकी भी जाँच–पड़ताल कर लें कि क्या प्रत्येक सृष्टि से पूर्व– 'एकोऽहं बहु स्याम' की बात सृष्टि निर्माण–प्रक्रिया के साथ मेल खा सकती है या नहीं? 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' और 'एकोऽहं बहु स्याम' को सत्य मानने का अर्थ होगा कि सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्म अपने में से ही जीव और जगत् को उत्पन्न करता है और प्रलय काल में जीव और जगत् पुनः ब्रह्म में अपना नाम–रूप खोकर एकाकार हो जाते हैं, अर्थात् पुनः ब्रह्म बन जाते हैं। प्रलय होने पर सब ब्रह्म रूप हो जाता है, शुद्ध और पूर्ण ब्रह्म, पुनः सृष्टि रचते समय 'एकोऽहं बहु स्याम' वाली बात नहीं बन सकेगी। ऐसे में बड़े–बड़े प्रश्न उत्तर माँगनै लगते हैं। सबसे बड़ा प्रश्न तो कर्मफल व्यवस्था को लेकर खड़ा होता है कि जिन्होंने तप–साधना और योगाभ्यास के द्वारा मुक्तिपद प्राप्त किया है उसका परान्त काल तक भोग कैसे सम्भव होगा? शास्त्र बताते हैं कि छत्तीस हजार बार सृष्टि और प्रलय होने के काल को परान्त काल कहते हैं और मुक्ति में जीव इतने काल तक आनन्द भोगता है। सुधी पाठक गणना करके देखना चाहें तो एक सृष्टि की आयु चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष है और इतनी ही प्रलय मानी गई है। इस प्रकार आठ अरब चौसठ करोड़ को छत्तीस हजार से गुणा करें तो परान्त काल निकल आता है, इतने काल तक जीव मुक्ति का आनन्द भोगता है। कुछ महानुभाव आग्रह करें कि मुक्ति में जीव का ब्रह्म में लय हो जाता है, वह ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त हो जाता है तो उनकी सेवा में वेदान्त दर्शन का एक सूत्र– 'भोगमात्र साम्य लिङाच्च' (4.4.21) प्रस्तुत करना चाहते हैं। यह सूत्र बता रहा है कि मुक्ति में जीवात्मा और परमात्मा एक मात्र आनन्द प्राप्ति में समान रहते हैं, अर्थात् परमात्मा सदा सर्वदा जिस आनन्द में रहता है, जो उसका स्वाभाविक आनन्द है मुक्त जीव परमात्मा के आश्रय में रहता हुआ, उस आनन्द–भोग में परमात्मा के साथ साम्यता रखता है, शेष गुण–सामर्थ्य की दृष्टि से वह आत्म–रूप सत्ता में रहता है, ऐसा महर्षि व्यास जी का मानना है। सरल शब्दों में कहें तो ज्ञान की दृष्टि से आत्मा परमात्मा की तरह सर्वज्ञ नहीं हो सकता, शक्ति की दृष्टि से सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता और स्वरूप की दृष्टि से वह एकदेशी ही है कभी सर्वव्यापक नहीं हो सकता। इस प्रकार बात चाहे मुक्तात्मा की हो या जन्म–मरण के बन्धन में बँधे जीवात्मा की इनमें से कभी कोई भी परमात्मा में लय नहीं होता, सदा–सर्वदा अपने अस्तित्व में बना रहता है।

न्याय दर्शनकार महर्षि गौतम भी इसकी पुष्टि कर रहे हैं– वे लिखते हैं– 'पूर्वकृत फलानुबन्धात् तदुत्पत्ति' (3.2.63) अर्थात् जैसे पूर्व जन्म के कर्म और उनके फलों से बँधे हुए जीव अगला जन्म प्राप्त करते हैं, ठीक उसी प्रकार पूर्व सृष्टि के अन्त में जिन जीवों के जैसे कर्म थे, उन कर्मों के फलों से बँधे हुए जीवात्माओं को फल प्रदान करने के लिए ही आगामी सृष्टि का सृजन होता है। यह न्याय की बात ही है, अगर किसी जीवात्मा के किए गए कर्मों का फल ही न मिला तो न्याय की भाषा में इसे 'कृतहानि' दोष कहते हैं। इसी प्रकार बिना कर्म किए किसी को सुख या दुःख की प्राप्ति होती है तो इसे 'अकृतागम' दोष मानते हैं। हमने कर्म तो किया मगर उसका फल न मिला तो न्याय नष्ट हो गया, किसी के किए की हानि हो गई। इसमें मानव की अज्ञानता के कारण एक पेंच और फँस जाता है, उसे अपने पाप कर्मों के फल न मिले तो बड़ी प्रसन्नता का अनुभव करता है। पाप कर्मों के फल से बचने के लिए मूर्खतापूर्ण प्रयत्न भी करता है, लेकिन अगर उसके एक भी पुण्य कर्म का फल न मिले तो न्याय व्यवस्था पर सौ लांछन लगाता है। ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या मानने वालों के साहित्य में तो ऐसी असंख्य कल्पित किस्से घटनाओं के रूप में अंकित हैं जिनमें इनके भगवान और देवता निरपराधी को दण्ड या श्राप देते फिरते हैं और जीवन भर के अपराधी को किसी छोटे से अच्छे काम व तिलक आदि चिह्न के कारण स्वर्ग का टिकिट दे देते हैं। परमात्मा की दृष्टि में चाहें किसी के पुण्य कर्म हों, चाहे पाप कर्म, सब कर्मों के फल निश्चित रूप से मिलते रहने से ही परमात्मा की न्याय व्यवस्था की पूर्ण सफलता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि परमात्मा के सब कार्य पूर्ण ही होते हैं, उसकी न्याय व्यवस्था भी सदा पूर्ण ही रहती है। अगर हम यह मान लें कि हर सृष्टि में नहीं बल्कि एक ही किसी विशेष सृष्टि में एक ही बार ब्रह्म ने 'एकोऽहं बहुस्याम' के अनुसार निजस्वरूप में से जीव और जगत् की रचना की थी। उस रचना के बाद शेष जितनी सृष्टि रचना व प्रलय का क्रम चल रहा है, वह जीवों के कर्मों के अनुसार फल देने के नियम से चल रहा है। ऐसा कहने वालों को सर्वप्रथम

तो यह बताना पड़ेगा कि वर्तमान सृष्टि से कितनी सृष्टियाँ पूर्व ब्रह्म ने ऐसा (एकोऽहं बहु स्याम) किया था? दूसरी बात प्रथम बार जब अपने स्वरूप से जीव बताए तो उनके प्रथम जन्म के योनि विभाजन का न्यायमुक्त आधार क्या था? अर्थात् पहली बार जब अपने स्वरूप से जीव बनाए तब उनमें से किसी को मानव का शरीर तो किसी को पशु–पक्षी, कृमि, कीट–पतंग आदि का जन्म किस आधार पर दिया? सबसे बड़ी बात यह है कि वेद में परमात्मा ने– यथापूर्वमकल्पयत्' का ज्ञान दिया है, अर्थात् यह बताया है कि जैसी सृष्टि रचना इस कल्प में की है उससे पूर्व कल्पों में वैसी ही की थी, तथा आगामी कल्पों में भी सृष्टि रचना इसी प्रकार की जाएगी। हम पहले भी लिख चुके हैं कि वेद के बाद महर्षि ब्रह्मा से लेकर महर्षि व्यास व उनके शिष्य आचार्य जैमिनी तक किसी मान्य ऋषि ने 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' और 'एकोऽहं बहुस्याम' का उल्लेख तक नहीं किया तो बिना प्रमाण बिना आधार और बिना तक पूर्ण सिद्धि के कोई विवेकशील पुरुष इस कोरी कल्पना को सच क्यों मान लेगा?

कुल मिलाकर जगत्! को मिथ्या, स्वप्न के समान और 'है ही नहीं, केवल भासता है' कहने वालों को किसी भी बात में कोई दम नहीं है। हाँ इनकी कोरी कल्पना के विरुद्ध इनके ही मान्य ग्रन्थों में अनेक वचन भरे पड़े हैं। हम केवल गीता को ही बात करें तो श्री कृष्ण कहते हैं– "नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।" (2.16) अर्थात् असत् (जो है ही नहीं) वस्तु की सत्ता (विद्यमानता) नहीं है और सत् (जो वस्तु है उसका) अभाव (नाश) नहीं होता। इस सिद्धान्त की व्यावहारिक व्याख्या भी गीता में मिलती है। "न त्वेवाहं जातु नाशं न त्वं नेमे जनाधिपः। न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम।।" (2.12) श्री कृष्ण कहते हैं– हे अर्जुन! न तो ऐसा है कि किसी काल में मैं नहीं था, तू नहीं था, अथवा ये राजा लोग नहीं थे, और न ऐसा है कि इससे आगे भविष्य में कभी हम सब नहीं रहेंगे। यहाँ श्री कृष्ण स्पष्ट घोषणा कर हैं कि जीवात्मा अजर, अमर अविनाशी है। इसी बात को आगे चलकर बीसवें श्लोक– 'न जायते म्रियते वा कदाचित् नायं भूत्वा भविता वा न भूयः। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणों व हन्यते हन्यमाने शरीरे।।" में बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा है कि यह आत्मा न जन्म लेता है (उत्पन्न होता) है, न मरता (नष्ट होता) है। यह अजन्मा है, नित्य है, शाश्वत है, पुरातन है, शरीर के मरने (नष्ट होने) पर यह जीवात्मा नहीं नष्ट होता– नहीं मरता। जीवात्मा के परमात्मा की तरह अजर, अमर, अविनाशी होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या चाहिए। जिन महानुभावों की इससे भी सन्तुष्टि न हो, उनके लिए गीता के पन्द्रहवें अध्याय के श्लोक – 'द्वाविमौ पुरुषौ लोके .... अक्षर उच्यते'। (16) तथा– 'उत्तमः पुरुषस्त्वन्य ...... बिर्भति अव्यय ईश्वरः।।' (17) के अर्थ प्रस्तुत हैं– इस संसार में नाशवान और अविनाशी ये दो प्रकार के पुरुष हैं। इनमें सब भूतप्राणियों के शरीर तो नाशवान हैं और जीवात्मा अविनाशी है। इन दोनों से उत्तम पुरुष तो अन्य ही है, जो तीनों लोकों में प्रविष्ट होकर सबका धारण करता है। यहाँ स्पष्ट रूप से प्रकृति को नाशवान (परिवर्तनशील) और जीवात्मा–परमात्मा को अविनाशी कहा है। जिसने न मानने की ठान रखी हो, उसके लिए कोई कुछ नहीं कर सकता।

अन्त में हम भलीभाँति विचार और विश्लेषण करके इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि 'ब्रह्म सत्य जगत् मिथ्या' की कल्पना निराधार है, अप्रमाणिक है, अवैज्ञानिक है, अव्यावहारिक है और अतर्क संगत है। बुद्धिमान, विवेकशील, सत्यनिष्ठ सज्जन इस कल्पना से जितनी जल्दी मुक्त होकर वेद व ऋषियों द्वारा मान्य त्रैतवाद के सत्य सिद्धान्त को स्वीकार कर लें, उतना ही सबके लिए सुखद है। सत्य विद्या और सत्य सिद्धान्तों के प्रति श्रद्धा रखना, इन्हें व्यावहारिक जीवन में स्वीकार करना मनुष्य होने का प्रथम व अन्तिम लक्षण है, कर्त्तव्य है। इसी एक गुण में सारे सद्गुण आ जाते हैं, इसी कर्त्तव्य के पालन में सब कर्त्तव्यों का पालन हो जाता है। अगर हमारे जीवन में सत्यविद्या और सत्य सिद्धान्तों के प्रति श्रद्धा और इन्हें व्यावहारिक जीवन में स्वीकार करने की शक्ति–सामर्थ्य नहीं है तो निश्चित रूप से हमारा जीवन सच्चे सुख और सच्ची शान्ति से सर्वथा शून्य है, आनन्द की तो बात ही क्या। हमारे पास समृद्धि हो सकती है, संसाधन हो सकते हैं, सुविधाएँ हो सकती हैं, लेकिन ये सब मिलकर हमें सच्चा सुख नहीं दे सकते, सच्चा संतोष व सच्ची शान्ति नहीं दे सकते। हाँ धन–सम्पत्ति, साधन–सुविधाएँ जुटाकर हमारा अहंकार पुष्ट होता है, उस अहंकार की पुष्टि–तुष्टि को ही हम सुख मान बैठते हैं। सुख का घर तो थोड़ा दूर है, वहाँ सत्य–पथ पर चलकर ही पहुँचा जाता है। आश्चर्य तो इस बात का है झूठ के झंझट में हम यह सब लिखने का विचार इसलिए आया कि विद्याहीन, स्वार्थी गुरुओं के गुरुडमवाद में फँसे भोले लोगों के सामने परमात्मा के सच्चे स्वरूप को रखने से वे इसे स्वयं समझने का प्रयास करेंगे तथा जो जगत् को मिथ्या बताकर स्वयं ब्रह्म बन बैठे हैं, उन गुरुओं के सामने इन प्रश्नों को रखकर उनसे उत्तर माँगेंगे। हमने तो ऋषि दयानन्द के उस आदेश को पालन करने का प्रयास किया है, जिसमें उन्होंने कहा था– ''विद्वान्, आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों को सत्य–असत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हित–अहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।'' वे आगे लिखते हैं– ''क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी (कार्य) मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है'।

सुधी पाठक! हम प्रारम्भ में ही यह प्रकट कर चुके हैं कि जगत् को मिथ्या व स्वप्न के समान मानने वाले स्वयं को जगत्गुरु' कहलवाकर गौरवान्वित होते हैं। भला झूठ का गुरु होना व जो है ही नहीं केवल भासता है, उसका गुरु होना किस कोटि का है और कैसा गौरव हो गया? झूठ का गुरु होना तो लज्जा की बात है। जगत् को मिथ्या (झूठ) बताकर जगद्गुरु कहलवाने व कहने वाले थोड़ी सी बुद्धि से काम लें तो सब झूठ में फँसने–फँसाने के पागलपन से सरलता से मुक्त हो सकते हैं। जगत् मिथ्या की कुटिल कल्पना ने हमारे बल–पौरुष व पराक्रम के साथ–साथ हमारी परिश्रम करके राज्य बनाने व बढ़ाने की पुरखों से प्राप्त प्रवृत्ति को भी प्राणहीन बना डाला है। हम कर्मठता को छोड़कर भाग्य वादी बनकर रह गए हैं। सांसारिक उन्नति तथा पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय कर्त्तव्यों के महत्त्व की अनदेखी करके सबको मुक्ति मार्ग के लिए प्रवृत्त करना जीवन के प्रति उचित दृष्टिकोण नहीं कहा जा सकता। आज सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात को समझने–समझाने की है कि हम अपने पारिवारिक, सामाजिक व राष्ट्रीय कर्त्तव्यों का निष्ठापूर्वक पालन करते हुए ही परमात्मा की भक्ति–उपासना कर सकते हैं। हमें अपने मन और मस्तिष्क में यह बात मोटे तौर पर चमकदार अक्षरों में लिख लेनी चाहिए कि एक गृहस्थी के लिए प्रातः सायं ईश्वर की संध्या–उपासना जितनी आवश्यक है, उतना ही आवश्यक है एक प्रभु–भक्त साधु –संन्यासी के लिए गृहस्थ जनों को सत्योपदेश करते हुए उन्हें व्यावहारिक ज्ञान देकर सांसारिक कर्त्तव्यों में प्रवृत्त करना।

जगत् मिथ्या नहीं है, जगत् परिवर्तनशील है, जगत् सत्य है। गीता में स्वयं योगेश्वर श्रीकृष्ण जी का कथन हम देख चुके हैं कि जो वस्तु है, उसका अभाव नहीं होता और जो नहीं है, उसका भाव नहीं होता। जगत् बनने की मूल सामग्री सत्, रज और तम अगर नहीं होती तो जगत भी नहीं होता। अन्तर केवल इतना है कि परमात्मा और आत्म अपरिवर्तन, अविकारी सत्ता हैं। यह परमपिता परमेश्वर द्वारा वेद के माध्यम से मनुष्यों के लिए दिया गया 'त्रैतवाद' का सत्य सिद्धान्त है। हमारे ऋषियों की बड़ी स्पष्ट मान्यता रही है– 'वादे वादे जायते तत्वबोधः' अर्थात् परस्पर मिल बैठकर संवाद करते रहने से सत्यतत्त्व का बोध होता है। आत्मा–परमात्मा व प्रकृति के सम्बन्ध में भी तत्वज्ञान पाने के लिए प्रश्नोत्तर के रूप में संवाद करते रहने में ही लाभ है। मैं तो एक बात प्रायः कहा करता हूँ कि संसार में कोई भी मनुष्य सर्वज्ञ होने का दावा नहीं कर सकता। कोई नहीं कह सकता कि मैं सब कुछ जानता हूँ। अगर मैं सब कुछ जान लेने का दावा नहीं करता तो मुझे अपने हृदय और मस्तिष्क के सब खिड़की–दरवाजे सदैव खुले रखने चाहिएँ, अर्थात् अधिकतम ज्ञान प्राप्त करने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। ज्ञान–विज्ञान पर कभी किसी का एकाधिकार नहीं माना जा सकता। आज ज्ञान–विज्ञान जिसके भी पास है, वह उसकी बपौती (पिता की सम्पत्ति) नहीं है, उसने भी कभी किसी से कुछ न कुछ सीखा होगा। ऐसे में हमें किसी भी ज्ञानी–विज्ञानी से कुछ भी ज्ञान लेने में स्वयं को छोटा नहीं समझना चाहिए। हाँ! जिससे ज्ञान–विज्ञान प्राप्त किया हो उसके प्रति सम्मान के भाव रखना तो बहुत आवश्यक है, लेकिन विनम्रतापूर्वक प्रश्न पूछने में संकोच करना या किसी की बात के बिना सोच विचार के स्वीकार कर लेना अपनी बौद्धिक दुर्बलता है। एक अच्छा विद्यार्थी एक अच्छे अध्यापक के साथ प्राथमिक विद्यालय से लेकर शिक्षा पूर्ण होने तक प्रश्नोत्तर कर सकता है। हमारा उपनिषद् साहित्य अध्यात्म ज्ञान के सम्बन्ध में गुरु–शिष्य के प्रश्नोत्तर से भरा पड़ा है तो हमारे आज के धर्मगुरु और उनके शिष्य इससे इतना डरते क्यों हैं? सच तो यह है कि जो विषय जितना जटिल,सूक्ष्म और व्यापक है, उसके सीखने–सिखाने में उतने ही अधिक प्रश्नोत्तर की सम्भावना अधिक होती है। जगत् मिथ्या का ढोल पीटने वालों के सामने प्रश्न खड़े किए बिना सत्य को सामने लाना महा कठिन काम है। सत्य को सामने लाने के लिए विनम्रता पूर्वक प्रश्न पूछना कभी किसी भी रूप में गलत नहीं है।

मो.7597894991
9079039088

वेदों में गणतन्त्रात्मक शासन

● शिवनारायण उपाध्याय

स्वामी दयानन्द सरस्वती का कथन है कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। सब विद्याओं में राज्य व्यवस्था सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। राज्य में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने का कार्य राज्य व्यवस्था का ही तो है। चारों वेदों में राज्य व्यवस्था और शासन प्रबन्ध से संबंधित लगभग 1250 मंत्र है। वेद में राज्य व्यवस्था के उद्गम का सिद्धान्त राजा और प्रजा के मध्य हुआ सामाजिक समझौते का सिद्धान्त है। राजा और प्रजा के मध्य समझौते में राजा को प्रजा ने कुछ विशेष अधिकार दिय और राजा ने दुष्ट आततायी लोगों से प्रजा की रक्षा का उत्तरदायित्व लिया। वेद में इस विषय पर निम्नांकित वर्णन हुआ है।

पाहिनो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्तेरराव्णः।
पाहि रीषत उत वा जिथांसतो बृहद्भानो यविष्ठ्य।।
ऋ.1.36.15

हे (बृहद्भानो) बड़े–बड़े विद्यादि ऐश्वर्य के तेज वाले (यविष्ठ्य) अत्यन्त तरूण अवस्था युक्त (अग्ने) तेजस्वी राजन्। आप(धूर्ते) कपटी, अधर्मी (अराव्णः) दान–धर्म रहित कृपण (रक्षसः) महा हिंसक, दुष्ट मनुष्य से (नः) हमको (पाहि) बचाइए। (रिषतः) सबको दुःख देने वाले मनुष्य से हमें पृथक् रखिए (उत) और (वाः) भी (जिघांसत) मारने की इच्छा करने वाले शत्रु से हमारी (पाहि) रक्षा कीजिए। खेती बाड़ी, धन, धान्यादि सब पदार्थो की रक्षा पूर्वक (उत्पत्ति) और न्याय पूर्वक विभाजन राज्य के द्वारा ही संभव है।

सुष्वाणास इन्द्रस्तुमसि त्वा सनिष्यन्तश्चित्तु विनृम्णवाजं।
आ नो भर सुवितं यस्य कोनातनात्मना सहयाम त्वोताः।।
सा. पूर्वार्चिक अ. 3 नवति दशति मं. 4

अर्थ– हे राजन्। सोमादिकों को उत्पन्न करते हुए और धान्यादि का न्याय पूर्वक विभाग करते हुए आपकी हम स्तुति करते हैं। हे बहुधन अथवा बहुबल आपसे रक्षित हम जिस धनादि की कामना करें उस प्राप्त करने योग्य धन आदि को हमारे लिए प्राप्त कराइए। हम आपकी कृपा से नाना प्रकार के धनों को प्राप्त करें।

राज्य की आवश्यकता क्यों अनुभव हुई इसके विषय में इसी प्रकार विस्तृत वर्णन वेदों में हुआ है।

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारितमानृभिः पुरूहूतः प्रयाहि।
असो यथानाडविता वृधश्चिददो वसूनि ममदश्च सोमैः।।
साम. पूर्वा. उनवी दशति मंत्र2

अर्थ–(इन्द्र) हे राजन् (सदने) आपके विराजने के लिए (ते) आपका (योनि) राज सिंहासन (आकारि) हमने बनाया है। (पुरूहूतः) हे बहुतो द्वारा पुकारे गए (तम्) उस सिंहासन पर (नृभिः) मंत्रियों सहित (आ प्र याहि) आकर विराजिए। (यथा) जिससे (नः) हमारे (अविता) रक्षक (चित्) और (वृधः) वर्जक (असः) बनिए। (वसूनि) विद्या और रत्नादि धन (दरः) हमें दीजिए। (च) और (सोमैः) सोमादि ओषधियों के रसों से (ममद) हृदय–पुष्ट हो जाउए।

इस मंत्र से स्पष्ट विदित होता है कि राज्य का निर्माण प्रजा ने स्वयं ही किया है। प्रजा ने ही बहुमत से राजा को चुना है। राजा को प्रजा की रक्षा करनी है और राजा द्वारा नियत किए नियमों का पालन करना है।

यह एक समझौतावादी सिद्धांत है जिसके अनुसार प्रजा में व्यवस्था स्थापित करने के लिए प्रजा द्वारा बहुमत से एक शक्तिशाली व्यक्ति को राजा के रूप में चुन कर उसे कुछ निश्चित अधिकार दिए जाते हैं जिसके एवज में वह व्यक्ति प्रजा के रक्षण का भार ग्रहण करता है।

व्यवस्था के लिए प्रजा के द्वारा राजा को कर देना आवश्यक है।

प्रजा महे महे वृधे भरध्वं प्रचेत से प्रसुमति कृणुध्वं विशः पूर्वी प्रचर चर्षणि प्राः।।
साम. पूर्वा. अ.3 दशमी दशति मं.6

हे मनुष्यो। तुम्हारे बड़े रक्षक सत्कार योग्य बुद्धिमान राजा के लिए कर भरो और अनुकूलता स्थापित करो। मनुष्यों के पालक राजा तुम प्रजाओं को अपने अनुकूल रखो।

राजा को उसकी सेवा के एवज में राज्य की सम्पूर्ण भूमि, खानों आदि का स्वामी स्वीकार किया गया है।

इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणी नामधिक्षमा विश्वरूपं यदस्य।
ततोददाति दाशुरे वसूनि चोद द्राध उपस्तु तं चिदर्वाक्।।
सा.पू.अ 6 प्रथम दशतिः मं. 2

प्रजापालक राजा जंगम पशु आदि और प्रजा का स्वामी है। राज्य में जो कुछ है वह सब राजा का है। राजा उसी में से प्रजा को धन देता है। राजा का चयन सम्पूर्ण प्रजा ने मिलकर किया है। इस पर कहा है–

त्वमग्ने वृणते ब्राह्मणा इमेशिवो अग्ने संवरण भवानाः।
सपत्नहाग्ने अभिमाति जिद्भव स्वे गये जागृह्यामयुच्छन्।।

अर्थ– हे तेजस्वी राजन्। हमारे चुनाव में मंगलकारी हो। हे तेजस्वी राजन्। शत्रुओं को विनष्ट करने वाला और अपनी सन्तान पर, धन अथवा घर वा अधिकार में चूक न करता हुआ जागता रहे।

पथ्या रेवति बहुधा विरूपाः सर्वा सुगत्य वरायस्ते अक्रन्।
तास्त्वा सर्वां संविदाना ह्ययन्तु दशमी मु ग्रः सुमना व शे ह।

मार्ग पर (पैदल) चलने वाली, धनवाली, विविध आकार एवं स्वभाव वाली सब प्रजाओं ने एक मत होकर, मिलकर तेरे लिए यह श्रेष्ठ पद प्रदान किया है। वे सब प्रजाएँ तुझको पुकारें। तेजस्वी और प्रसन्न चित्त तू इस राज्य में दसवीं अवस्था को वश में कर। वेद में अकेले राजा को सर्वोच्च शक्ति प्राप्त नहीं है। राजा को तीन सभाओं के द्वारा दी गई सलाह के अनुसार कार्य करना होता है।

त्रीणि राजाना विदथे परिविश्वानि भूषथः सदासि।
अपश्यमत्र मनसा जगन्वान्व्रते गंधर्वा अपि वायु केशाना।। ऋ. 3.38.6

वेद में कहा गया है कि राजा और प्रजा के पुरूष मिलकर सुख प्राप्ति और विज्ञान वृद्धि कारक राजा–प्रजा के सम्बन्ध रूप व्यवहार में तीन सभा अर्थात् विद्यार्य सभा, धर्मार्य सभा, राजार्य सभा नियत करके बहुत प्रकार के समग्र प्रजा सम्बन्धी मनुष्यादि प्राणियों को सब ओर से विद्या, स्वातन्त्र्य, धर्म, सुशिक्षा और धनादि से अलंकृत करे। स्वामी दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं–

तं सभा च समितिश्च से ना च। अथर्व. 15.2.9.2
सभ्य सभाव मे पाहि ये च सभ्याः सभासदः।।
अथर्व. कां. 19 अनु 7 व 55 मं.6

उन राज धर्म को तीनों सभा, समिति और सेना मिलकर पालन करें। सभासद और राजा को योग्य है कि राजा सब सभासदों को आज्ञा कि सभा के योग्य मुख्य सभासद तू मेरी सभा की धर्म व्यवस्था का पालन कर और जो सभा के योग्य सभासद हैं वे भी सभा की व्यवस्था का पालन किया करें। इसका आशय यह है कि एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए किन्तु राजा जो सभापति तदधीन सभा, समाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राज्य सभा के अधीन रहे जो ऐसा न करोगे तो राष्ट्रमेव विशा हन्ति तस्माद्राष्ट्री विश घातुकः।

विशमेव राष्ट्र याद्यां करोति तस्माद्राष्ट्री विशमति च पुष्टं मन्यत इति। शत. का.13 अनु.2 ब्रा.3 जो प्रजा से स्वतंत्र स्वाधीन राजवर्ग रहे तो राज्य में प्रवेश करके प्रजा का नाश किया करें। इसलिए अकेला राजा स्वाधीन वा उन्मत्त होकर प्रजा का नाशक होता है अर्थात् वह प्रजा को खाए जाता है इसलिए किसी एक को राज्य में स्वाधीन न करना चाहिए। जैसे सिंह या मांसाहारी हष्ट–पुष्ट पशु को मार कर खा लेते हैं वैसे स्वतन्त्र राजा प्रजा का नाश करता है।

वेदों में राष्ट्र की भावना का भी यजुर्वेद अध्याय 10 में विशद वर्णन हुआ है। ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 125 की ऋचाओं में सभा के अधिकारों का अच्छा वर्णन हुआ है। पाठकों के लिए मैं यहाँ पर दो ऋचाएँ प्रस्तुत करता हूँ।

अहं राष्ट्री सङ्गमनी वसूनां चिकितुषी प्रथम यज्ञियानाम्।
तां मा देवा व्यदधुः पुरूत्रा भूरिस्थात्रां भूयां वेशयन्तीम।। ऋ.10.125.3

मैं राष्ट्र सभा पूरे राष्ट्र की स्वामिनी हूँ। धनों की सम्यक् प्राप्ति कराने वाली हूँ अर्थात् राष्ट्र का आय–व्यय निर्धारित करती हूँ। उत्तम कार्यों और व्यवहारों की मुख्य सोच विचार और निर्णय करने वाली मैं हूँ। सभी कर्मचारियों के अधिकार और कर्त्तव्य मैं निर्धारित करती हूँ। ये शक्तियाँ सभा को प्रजा से प्राप्त हुई हैं। कुछ ऋचाओं में तो राष्ट्र सभा की शक्ति का ऐसा वर्णन हुआ है कि जैसे वह कोई तानाशाह शासक हो।

अहं सुवे पितमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे।
ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं वर्ष्मणोप स्पृशामि।। ऋ. 10.125.7

अर्थ– मैं राष्ट्र की शिखर पर पालन राजा को उत्पन्न करती हूँ। वास्तव में राष्ट्र सभा में सर्वाधिक मत प्राप्त व्यक्ति को ही संसद द्वारा प्रधान शासक चुना जाता है मेरा स्थान आकाश में और समुद्र में भी है। इसी कारण से समस्त भुवनों में स्थिर रहती हूँ। इस आकाश की श्रेष्ठता को छूती हूँ।

मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति प्राणिति य ई श्रृणोत्युक्तम्।
अमन्तवो मां त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि।। ऋ. 10.125.4

अर्थ–(यः विपश्यति) जो विशेष रूप से उसे देखता है अर्थात् विशिष्ट ज्ञानी है, (यः प्राणिति) जो प्राण युक्त (यई उत्तम श्रृणोति) इस वचन को सुनता है (सः) वह (मया) मेरे द्वारा (अन्नम् अत्ति) अन्न खा रहा है। (माम् अमन्तवः) मुझे न मानने वाले (न उप क्षियन्ति) मेरे समीप नहीं होते दूर ही रहते हैं। (हे श्रुत) हे विद्वान् (श्रुधि) सुन (ते) तेरे लिए (श्रुद्धिवम्) श्रद्धा योग्य वचन (वदामि) कहती हूँ।

वेद में राष्ट्र की भावना की अभिव्यक्ति यजुर्वेद अध्याय 10 के प्रथम चार मंत्रों में हुई है, वहाँ बार–बार राष्ट्र दा राष्ट्रं मे देहि आप राष्ट्राध्यक्ष का चुनाव कर रहे हैं कृपया मुझे राष्ट्र पति पद के लिए चुनें। वेदों में राज्यशक्ति का विकेन्द्रीकरण हुआ है। सम्पूर्ण सत्ता पर एक व्यक्ति का अधिकार नहीं है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में इसका अच्छा विस्तृत वर्णन किया हुआ है। पाठक उसे भी देखें। इति शम्।

शास्त्री नगर, दादाबाड़ी–कोटा

भगवान से झगड़ने का मज़ा

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

शीर्षक देखकर आप चौंकिए मत। मैं तो बहुत पहले भगवान से झगड़ने के मूड़ में था साधना–उपासना रूपी नौकरी टेम्प्रेरी थी, डर था कि कहीं नौकरी से निकाल न दिया जाऊँ, भगवान की नज़रों में गिर न जाऊँ। पर अब अनेक वर्षों की साधना के बाद स्वयं को भगवान की नौकरी में परमानेंट समझ रहा हूँ। सोचता हूँ, अब लड़–झगड़ कर देख लूँ। शायद जीत ही जाऊँ और यदि हारने का डर रहा तो यूनियन बना लूँगा। यदि भगवान ने पूछा कि तुमने यूनियन क्यों बनाई तो कह दूँगा कि यूनियन आपकी परमिशन और आपके कानून या नियमों के आधार पर बनाई है। भगवान् पूछेंगे, कैसे? तो मैं एक वेद मंत्र प्रस्तुत करके बता दूँगा। वह वेद मंत्र है– **'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्'** इसका अभिप्राय है कि एक साथ मिलकर चलो, मिलकर मधुर वाणी बोलो। मैं साथ ही भगवान से पूछूँगा कि बताइए, क्या यह आपकी शाश्वत वेदवाणी का मंत्र नहीं है? 'संगच्छध्वं' और 'यूनियन' में क्या समानता नहीं है? हम जहाँ साथ–साथ मिलकर चलेंगे, क्या वहाँ यूनियन नहीं होगी?

पहले मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि भगवान से वही लड़–झगड़ सकता है, जिसने परमपिता परमात्मा के प्रति पूर्ण समर्पण कर दिया हो, जो हर पल उसी के ध्यान में निमग्न रहता हो, जो अपनी करुण पुकार में कह सके वेद वाणी के माध्यम से, **'त्व हि नः पिता वसो त्वं माना शतक्रतो बभूविथः'** अर्थात् तुम ही हमारे जन्म दाता पिता हो और तुम ही हमारा पालन करने वाली माता हो। यह समग्र समर्पण ही भगवान से लड़ने–झगड़ने की शक्ति प्रदान प्रदान करता है। यहाँ पर मैं एक बात स्पष्ट कर दूँ कि लड़ने–झगड़ने का जो अभिप्राय आप समझ रहे हैं, वह मेरा अभिप्राय नहीं है। परमात्मा से झगड़ने का तात्पर्य है, परमात्मा को पाने के लिए अपना अधिकार जताना। उसको विवश कर देना कि वह आपकी ओर देखे, आपकी विरहानुभूति को समझे, आपके आँसुओं को देखकर पसीजे, जहाँ प्रेम होता है, वही अधिकार होता है और एक–दूसरे को अपना समझकर आत्मीयता पूर्ण झगड़ा भी होता है। आत्मा–परमात्मा की नोक–झोंक में न तो जीवात्मा सोता है और न परमात्मा को नींद आती है। यदि जीवात्मा रोता है तो परमात्मा उसके आँसू पोंछता है।

अब प्रश्न यह है कि भगवान् से झगड़ा क्यों किया जाए, इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि पहले पत्नी अपने पति के प्रति पूर्ण समर्पण करती है, उसे सच्चे हृदय से प्यार करती है और फिर छोटी–छोटी बातों में टोका–टोकी करती है और यदि पति तब भी काबू में न आए तो झगड़ा करती है। तब हजारों कर्मचारियों पर शासन करने वाला ऑफिसर पति अपनी पत्नी के सम्मुख भीगी बिल्ली बन जाता है। इसी प्रकार भगवान से झगड़ने के लिए बैकग्राउन्ड का होना आवश्यक है। परमात्मा से इतना प्रेम करो कि उससे झगड़ने में मज़ा आ जाए। एक आज्ञाकारी पुत्र अपने पिता से लड़–झगड़ कर अपनी सारी बातें मनवा लेता है तो क्या हम परम पिता परमात्मा के पुत्र–पुत्रियाँ नहीं हैं? क्या हमारे वैदिक ऋषियों ने भगवान को अपना पिता मानकर उनसे झगड़ा नहीं किया था? इसका उत्तर है, किया था। उन्होंने भगवान से स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि आप हमारे पिता हैं, सबके भगवान हैं। यदि आप भगवान् (ऐश्वर्ययुक्त) हैं तो हमें भी भगवान क्यों नहीं बनाते? पिता भगवान और पुत्र भाग्यहीन हो, यह बात कुछ अटपटी लगती है। वैदिक ऋषियों ने जिस प्रातःकालीन वैदिक मंत्र में यही बात कही है, वह इस प्रकार है–

'भग एवं भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।'

आप प्रश्न कर सकते हैं कि क्या साहित्य में ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि कवियों की, साधकों की, भगवान् से तू–तू, मैं–मैं हो गई हो। इसका उत्तर है– 'हाँ' भक्तिकालीन कवि कबीरदास जी की भगवान से ऐसी तू–तू, मैं–मैं हो गई कि वे रूठ कर जाने लगे। यह देखकर भगवान घबरा गए और कबीरदास जी के पीछे भागते हुए कहने लगे, 'बेटा, कबीर क्यों नाराज़ होते हो– **"पीछे–पीछे हरि चले, कहत कबीर–कबीर"** कई बार तो भक्त और भगवान में नोंक–झोंक ही नहीं होती है बल्कि आत्मा परमात्मा को वार्निंग भी दे देती है। परमात्मा को जवाब देना मुश्किल हो जाता है। अपनी लाज बचानी कठिन हो जाती है। एक प्रसंग में विरहिणी आत्मा परमात्मा रूपी पति से कहती है कि या तो तुम मुझे अपना रूप दिखा दो या फिर मुझे मृत्यु ही दे दो। मैं आठों पहर तुम्हारे विरह को नहीं झेल सकती– **'या विरहिन को मोचु दे, या निज रूप दिखाय।'**

आठ पहर का दाँझना, मो पै सहा न जाय।। (कबीर) प्रायः ऐसा भी होता है कि भक्त और भगवान आमने–सामने मुकाबले के लिए डट जाते हैं। कोई भी पीछे हटने को तैयार नहीं होता। भक्त भगवान से कहता है कि आपको अपने पर बड़ा घमण्ड है कि आपने हज़ारों पापियों का उद्धार कर दिया है। लेकिन वे छोटे पापी रहे होंगे। यदि वास्तव में आपमें इतनी ही शक्ति है तो मुझ जैसे पापी का उद्धार कर दो, तब मैं आपको मान जाऊँगा–

हमहिं तुमहिं बाढ़ी बहस, को जीते जदुराज।
अपन–अपने विरद की, दुहुँ निबाहत लाज।। (बिहारी)

एक बार बालक मूलशंकर भी भिड़ गए थे तथाकथित भगवान से शिवरात्रि के दिन प्रतिमा की सत्ता में विद्यमान तथाकथित भगवान मूल शंकर के अन्तर्मन में बुदबुदाए कि मैं भगवान हूँ। लेकिन जब शिव प्रतिमा पर ही चूहे ने उछल–कूद शुरु कर दी तो मूलशंकर ने तथाकथित भगवान के प्रति विद्रोह कर दिया। उन्होंने कहा कि मैं सच्चे शिव को खोज कर ही दम लूँगा। फिर क्या था, वे सच्चे शिव (निराकार ईश्वर) की खोज में वनों, पर्वतों और कन्दराओं में भटकते रहे और ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर ही दम लिया। आर्य समाज का दूसरा नियम (ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप....) उसी विद्रोह या झगड़े की उपज है।

झगड़ा या विद्रोह तीव्र जिज्ञासाभाव को जन्म देता है। वही जिज्ञासाभाव मनुष्य को मंजिल तक ले जाता है। जहाँ जिज्ञासा भाव नहीं, वहाँ ज्ञान भी नहीं, जहाँ ज्ञान नहीं, वहाँ अज्ञानता का साम्राज्य होता है। अज्ञानता ही ईश्वर की प्राप्ति में बाधक है। अतः यदि ईश्वर तक जाना है, उसे पाना है तो पहले उससे प्रेम कीजिए, थोड़ी बहुत छेड़छाड़ कीजिए, यदि तब भी ईश्वर पर प्रभाव न पड़े तो झगड़ा भी कर डालिए। यदि झगड़े पर वह निष्ठुर ही बना रहे तो आँसू बहाते हुए रूठ जाइए। फिर देखिए, ईश्वर कैसे मनाता है आपको! इस झगड़ने, रूठने और प्रेम भरी तकरार करने में आपको जो मजा आएगा, उसे धीरे से, चुपके से, हमें भी बता दीजिए। आपकी शपथ, हम किसी को नहीं बताएँगे।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम
ज्वालापुर (हरिद्वार)
मो. 9639149995

☞ पृष्ठ 03 का शेष

बोध कथाएँ...

है, मैं अपनी माँ से बहुत प्यार करता हूँ, परन्तु कल से ऐसा प्रतीत हो रहा है कि एक ग्रामीण का मकान है, कच्चा मकान। चारदीवारी के भीतर एक सेहन है। सेहन के परे एक कोठरी। ऐसा प्रतीत होता है कि कोठरी में मेरी माँ अपने बालों को खोले बैठी हैं, बालों को सुखा रही हैं। तभी मैं हाथ में तलवार लेकर सेहन में पहुँचा हूँ। सेहन से एक कोठरी में चला गया हूँ। अन्दर जाकर मैंने अपनी माँ को बालों से पकड़ा है। उन्हें घसीटता हुआ बाहर के सेहन में ले आया हूँ। माँ चिल्ला रही हैं और मैं उनके वक्षःस्थल पर तलवार से वार के ऊपर वार कर रहा हूँ। वह रो रही हैं, चिल्ला रही हैं, लहूलुहान हो गई हैं, परन्तु मैं रुकने का नाम ही नहीं लेता। वह भयानक दृश्य मुझे बार–बार दिखाई देता है। अपनी ही माँ के लिए ऐसी बातें मेरे मन में आएँ, इससे तो अच्छा है कि मैं मर जाऊँ।"

मैंने सोचते हुए कहा– "कल तूने खाया क्या था?"

उसने कहा– "जेल का जो साधारण खाना मेरे लिए आता हैं, वही खाया था। अन्तर केवल इतना है कि कल जो भोजन खाया, वह पहले से अधिक स्वादिष्ट था। शायद कोई नया–नया रसोइया जेल में आया है। परन्तु अच्छा भोजना बनाता है वह।"

इस बात से मेरे मन को सन्तोष नहीं हुआ। मैंने जेल के दरोगा महोदया से पूछा– "रणवीर को जो भोजन आप देते हैं, उसे कल किसने बनाया था?"

उसने बताया कि कल से एक नए कैदी को खाना बनाने पर लगाया है।

मैंने पूछा– "यह कैदी कौन है?"

उन्होंने उस कैदी का रिकॉर्ड मँगवाकर बताया कि– "उसे अपनी माँ को कत्ल करने के अपराध में आजीवन कारावास मिला है। वह गाँव में रहता था, कच्चे मकान में जहाँ चारदीवारी के भीतर एक सेहन था। सेहन के परे एक कोठरी थी। उस कोठरी में उसकी माँ नहाने के पश्चात् अपने बाल सुखा रही थी कि वह व्यक्ति, जो उसके धन का अधिकार करना चाहता था, तलवार लेकर सेहन में आया। वहाँ से कोठरी में गया। माँ को घसीटता हुआ सेहन में ले आया। वहाँ बार–बार तलवार के वार करके उसे मार डाला। मरनेवाली के क्रन्दन से लोग आ गए। उन्होंने माँ के हत्यारे को पकड़ लिया।"

मैं यह बात सुनकर चकित रह गया। जिस व्यक्ति ने भोजन बनाया, उसके मन के विचार किस प्रकार भोजन करनेवाले के मन में पहुँच गए– यह देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। मैंने उससे कहा– "रणवीर का भोजन उस व्यक्ति से मत बनवाइए।"

वे सज्जन व्यक्ति थे, मान गए। तीसरे दिन मैं रणवीर के पास पहुँचा तो पूछा– "अब तो वह भयानक दृश्य दिखाई नहीं देता?"

वह प्रसन्न था। हँसता हुआ बोला– "अब तो दिखाई नहीं देता। अब तो मन फिर से एकाग्र होने लगा है।

यह है अन्न का प्रभाव!

बुरी कमाई का ही नहीं, बुरे व्यक्ति के हाथ का बनाया हुआ अन्न भी मन पर प्रभाव डालता है।

क्रमशः

अन्त्येष्टि संस्कार प्रबन्धन को लेकर आर्यसमाज से बृहद् हिन्दू समाज की अपेक्षा : एक वस्तुपरक विमर्श

● भावेश मेरजा

भूमिका : गत सप्ताह एक आर्यसमाज–हितेच्छु प्रबुद्ध वैज्ञानिक ने फेसबुक पर अपने एक सहकर्मी के अन्त्येष्टि संस्कार के प्रसंग का विवरण प्रस्तुत किया जिसमें आर्यसमाज का भी उल्लेख किया गया था। उनकी इस पोस्ट को पढ़कर कई अन्य आर्यसमाज–हितेच्छु व्यक्तियों ने इस पर अपनी–अपनी टिप्पणी व्यक्त की। आर्य समाज के सदस्यों, नेताओं तथा विद्वानों को इस विषय पर मन्थन करने की महती आवश्यकता है, जिससे आर्यसमाज को अधिकाधिक समाज–उपकारक किया जा सके – इस उद्देश्य से विमर्श को संकलित कर यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

आज एक (सहकर्मी) की असामयिक मौत के बाद उसके शव को मोर्चरी में ले जाया गया। मोर्चरी में आए हुए आज के केसेस में दो आत्महत्या वाले थे। उनकी कहानी जानकर लगा कि हम अपनी जिन्दगी को कितने सस्ते में निबटा दे रहे हैं और हमारे समाज ने हमारे जिन्दा रहने को कितना मुश्किल व महँगा बना दिया है। खैर, आज जो मैं लिखने जा रहा हूँ उसका विषय कुछ और है। अब अन्दर सहकर्मी का पोस्ट मार्टम चल रहा था तो बाहर उसके परिजनों व वहाँ उपस्थित अन्य सहकर्मियों के वार्तालाप में मुझे 'आर्यसमाज' शब्द सुनाई दिया। मैं भी उनके पास पहुँच गया और मालूम करने पर पता चला कि परिजन चाहते हैं कि दाह संस्कार आर्यसामाजिक रीति से सम्पन्न हो। हालाँकि वो पौराणिक थे लेकिन जवान मौत के कारण वह कोई तेरहवीं मृतक भोज आदि नहीं करना चाहते थे और तीन दिनों में ही हवन आदि कराकर जल्द से जल्द इसका समापन चाहते थे। इसके लिए उन्होंने निगमबोध घाट पर व्यवस्था कराने के लिए किसी को भेज दिया था। मैंने पूछा कि क्या किसी आर्यसामाजिक पण्डित (पुरोहित) की व्यवस्था करनी है तो बताया गया कि नहीं पण्डित वहीं निगम बोध घाट पर उपलब्ध होते हैं और वहाँ पर इस संबंध में बात कर ली गई है। मुझे बड़ा सुखद आश्चर्य और संतोष हुआ कि चलो आर्यसमाज ने ऐसी जरूरत की जगह तो अपनी उपस्थिति बनाई हुई है। करीब 4 बजे शाम को हम निगमबोध घाट पहुँचे तो हमारी एम्बुलेंस के पास तिलक लगाए और गुटखा चबाते हुए एक दो लफंडर से आकर खड़े हो गए। उन्हें देखकर मेरे मृत सहकर्मी के भाई ने मुझसे पूछा कि ये कौन लोग हैं। तो थूक गटकते हुए उन्होंने बताया कि हम पंडित हैं और हम संस्कार कराएँगे। मैंने कहा कि लेकिन इन्होंने तो संस्कार के लिए शायद अलग से किसी पण्डित जी से बात की हुई है? तो उनमें से एक पण्डित बोला कि हाँ हम ही तो वो हैं और आर्यसामाजिक रीति से ही तो यह संस्कार होना है ना? मृतक के भाई ने कहा हाँ हाँ आर्यसामाजिक रीति से हमें ही कराना है। मुझे फिर बड़ा आश्चर्य हुआ कि आर्यसामाजिक पुरोहित भी ऐसे लफंडर टाइप के दिखने लगे आजकल। फिर मुझे लगा कि शायद ये मजदूर टाइप के पुरोहित होंगे और पौराणिक व आर्यसामाजिक दोनों ही रीतियों से संस्कार कराकर पैसा कमाते होंगे। खैर, 1 घंटे बाद मृतक को स्नान आदि कराया गया और घर परिवार वालों को संकेत से यह संदेश भी दिया गया कि जिसे जो दक्षिण देनी हो वह दे दे। उसके बाद दाह संस्कार आरम्भ हुआ जिसमें रामनाम सत्य है, सत्य बोलो गत्य है जैसा कुछ उसने 15–20 बार बोला व बुलवाया और 11 बार गायत्री मंत्र का उच्चारण किया। इसके अलावा किसी भी मंत्रादि का पाठ नहीं किया गया। इस सब कर्मकाण्ड को वहाँ उपस्थित हर व्यक्ति आर्यसामाजिक रीति से सम्पन्न होता हुआ समझता रहा और मैं मन ही मन सोचता रहा कि ये आर्यसमाज के साथ अन्याय हो रहा है या आर्यसमाज इन अनभिज्ञ व शोकातुर परिजनों के साथ अन्याय कर रहा है। खैर जो भी हो, आर्यसमाज अमर रहे!

उपर्युक्त मूल पोस्ट पर प्राप्त कतिपय महत्त्वपूर्ण टिप्पणियाँ

1. मुझे लगता है कि ऐसे अयोग्य बहुरूपिए ''पण्डित'' दोनों – आर्यसमाज एवं मृतक परिवार – के साथ अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु अन्याय कर रहे हैं। आर्यसमाज अपने आधिकारिक पुरोहितों की सेवा वहाँ उपलब्ध करा सकता तो ऐसा नहीं होता।

2. बिल्कुल...आर्यसमाज को अपनी सेवाएँ सुलभ बनानी चाहिए। दिल्ली नगर निगम से बात करके वहाँ अपने एक दो पुरोहितों की उपस्थिति का प्रबंध किया जा सकता है।

3. आर्य समाज में कोई भी योग्य पुरोहित कार्य नहीं करते हैं..... न उन्हें यथायोग्य दक्षिणा मिलती है न सम्मान। मैंने बहुतों को पुरोहिताई छोड़कर अन्य कार्य करते देखा है।

4. बिल्कुल सही कहा, अभी भी बहुत से लोगों की आर्य समाज में बहुत श्रद्धा है किन्तु आर्य समाज की ही पहुँच वहाँ तक नहीं हो पाती। बहुत से पदाधिकारी भी वक्त जरूरत पड़ने पर दैनिक यज्ञ या विशेष यज्ञ या संस्कार नहीं करा पाते। ईमानदार एवं योग्य पुरोहित भी कम ही हैं लेकिन हैं।

5. सादर बहुत कठोर सत्य बताता हूँ– हमने जिन्हें आँख खुलते अच्छे धार्मिक आर्यसमाजी पाया, वे पुरोहित बनकर भ्रष्ट हो गए! यहाँ तक कि अपने 'जिजीमानों' के समक्ष आर्यसमाज के घनघोर निन्दक हो गए! इसमें भी कहीं न कहीं भ्रष्टाचार घुस आया है। पुरोहिताई के कारण कई लोगों को पतित होते देखा गया है। इसमें भी शुचिता आवश्यक होती है। यदि नहीं है तो यह व्यवसाय की भाँति ही है। अपरिग्रह विलुप्तप्राय है। इसमें एक दूसरा उदाहरण स्व. आचार्य विश्वबन्धु शास्त्री का हमारे सामने है। वे कहीं भी हवन इत्यादि कराते थे तो दक्षिणा नहीं लेते थे। कहीं बोलने जाते थे तो भी किराया अपनी जेब से ही देते थे। अपने महर्षि दयानन्द सरस्वती शिशु मन्दिर का उद्घाटन करने मैंने उनको विशेष तौर पर आमन्त्रित किया। इस कार्यक्रम में उन्होंने दक्षिणा ली और बाद में दक्षिणा जितनी राशि रखकर हमारे शिशु मन्दिर को तुरन्त वापस कर दी। मुजफरनगर तक मैं उनके साथ जाता था लेकिन अपना किराया स्वयं देते थे। अन्तिम बार जब आप हमारे घर से अपने गाँव लौटे तो मैं मुजफरनगर तक उनके साथ जा रहा था तब मैंने उनका बस किराया देने को जोर दिया तो नाराज होकर बोले– ''देखो!...जी, यदि मुझे अपने यहाँ नहीं बुलाना है तो मेरा किराया दे दीजिए! ''80 के उपरान्त वे अकेले सिद्धान्तों पर बोलने जाया करते थे और कभी किसी से रुपया नहीं लेते थे। आप पौराणिक ब्राह्मण परिवार में जन्मे थे परन्तु आपकी गजब की सैद्धान्तिक समझ और सैद्धान्तिक आचरण चमत्कृत कर देता था। आपका बड़ी आयु में भी भोजन युवकों जैसा था अर्थात् घी, दूध आदि को बड़े चाव से लेते थे। पाचन शक्ति बहुत अच्छी थी। दोनों समय सन्ध्या करते थे और कहीं न कहीं वैदिक उपदेश देने जाते थे। अधिकतर धर्म प्रचार के लिए यायावर ही रहा करते थे। वैदिक व्याकरण के जानने वाले आप हमारे इधर एकमात्र वैयाकरण थे। अस्तु। क्षमा चाहूँगा विषय से हटकर लिखने के लिए। इस बहाने मुझे आचार्य विश्वबन्धु शास्त्री का स्मरण हो आया था।

6. बहुत लज्जाजनक स्थिति में रख दिया गया है आर्यसमाज को!

7. विवरण पढकर कष्ट हुआ। स्थिति पर शीघ्र नियन्त्रण करके सुधार की आवश्यकता है।

8. यह पढ़कर और दुःख हुआ कि आर्य सामाजिक रीति से अन्त्येष्टि संस्कार की चाह होते हुए भी परिवार जन ठगे गए। जी हाँ, मेरी दृष्टि में तो यह ठगी ही है। आर्य सामाजिक पण्डित उस समय उपलब्ध नहीं हुआ इसके दो कारण हो सकते हैं– पहला यह कि परिवार जन सही लोगों से सम्पर्क न कर पाए और श्मशान के ठगों द्वारा ठगे गए। दूसरा कारण यह कि आर्यसमाज अपने पुरोहित की सेवा उपलब्ध कराने में असफल रहा। और इस स्थिति में विडंबना यह कि निगमबोध श्मशान घाट का कुछ प्रबन्धन कार्य दिल्ली के एक बड़े आर्यसमाज के आधीन है। कौन सा कार्य और कौन सा समाज है, यह स्मरण नहीं, परन्तु ऐसा वहाँ पट्टिकाओं पर लिखा देखा है। निगमबोध पर आर्यसामाजिक अन्त्येष्टि यज्ञ के लिए कुछ वेदियाँ अवश्य हैं।

9. आजकल निगम बोध घाट का प्रबन्ध किसी आर्य समाज के पास नहीं है।

10. पुरोहिताई के कारण व्यक्ति का पतनोन्मुख हो जाना काफी हद तक स्वाभाविक है और यह बात भी सही है कि जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रबन्ध होना भी आवश्यक है। वह भी सम्भव है कि ऐसी दशा में व्यक्ति को जो भी पहले या आसानी से मिल जाता है उसी पर भरोसा कर लेता है या कहें कि करना पड़ता है। लेकिन दूसरा कारण भी सत्य ही है क्योंकि अब वहाँ पर किसी भी आर्यसमाज आदि के नाम या सम्पर्कसूत्र की पट्टिका आदि नजर नहीं आती।

11. वैसे यदि आर्यसमाज की कोई संस्था उन इच्छुक गृहस्थों को जिनके पास अपनी आजीविका का स्थायी प्रबन्ध है, कर्मकाण्ड के कार्यों के लिए प्रशिक्षित करे और उनको संस्कार आदि कराने के 10–20 अवसर प्रदान कराके व्यवहारिक ज्ञान दे, तो इस तरह के गृहस्थ जहाँ और जब संभव हो अपनी सेवाएँ देकर आर्यसमाजों का बोझ भी कुछ हद तक कम कर सकेंगे। और इन आवाराओं से तो अच्छा ही संस्कार करा देंगे।

मो. 09879528247

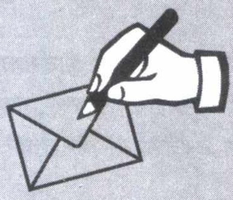

पत्र/कविता

गणतंत्र दिवस का सन्देश

महापर्व गणतंत्र दिवस को मिलकर सभी मनाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
राम कृष्ण की जन्म भूमि यह भारत देश हमारा है।
ऋषियों–मुनियों की धरती है, मान रहा जग सारा है।
अर्जुन, भीम, नकुल का भारत, सारे जग से न्यारा है।
सत्य, अहिंसा, परमधरम, भारत वीरों का नारा है।
चाणक्य, चन्द्रगुप्त विक्रम की, जग को याद दिलाओं रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
फूट आपसी के कारण, भारतवासी परतंत्र रहे।
दुष्ट विधर्मी विदेशियों के, भारतीयों ने जुल्म सहे।।
इज्जत लुटी देवियों की, सौनित के दरिया यहां बहे।
अत्याचार हुए थे भारी, हम से जाते नहीं कहे।।
पढ़ो सभी इतिहास ध्यान से, समझो अरु समझाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
ईश्वर की कृपा से फिर, जागे भारत के नर–बंका।
बापा रावल सांगा ने, था बजा दिया रण का डंका।।
महाराणा प्रताप शिवा ने, नहीं काल की, की शंका।
पापी हत्यारे यवनों का, जला दिया था गढ़ लंका।।
सती पद्मणी कर्णवती की, गौरव गाथा गाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
जगत गुरु ऋषि दयानन्द ने, सोया देश जगाया था।
तात्या टोपा, तुलाराम को, वैदिक पथ दर्शाया था।।
नन्द किशोर, मंगल पाण्डेय को, ऋषि ने शिष्य बनाया था।
नाहर सिंह, लक्ष्मी बाई को, धर्म–कर्म समझाया था।
बहादुर शाह अरु कुंवर सिंह से, वीर बनो यश पाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
तिलक गोखले नौरोजी ने, भारी लड़ी लड़ाई थी।
स्वामी श्रद्धानन्द जी ने, सीने पर गोली खाई थी।।
वीर लाजपत, बिस्मिल, शेखर, भारत के दीवाने थे।
राज गुरु, सुखदेव, भगत सिंह, देश भगत मर्दाने थे।।
ऊधम सिंह अरु मदन लाल बन, जग में धूम मचाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।
भारत के सब युवक–युवतियों! जागो धर्म निभाओ तुम।
भारत के शहीदों की, खुश होकर गाथा गाओ तुम।।
चरित्रवान, ईमानदार बन, जग में नाम कमाओ तुम।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ तुम।।
"नन्दलाल" निर्भय वीरो! दुष्टों के शीश उड़ाओ रे।
अपने प्यारे आर्य वर्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।

पं. नन्दलाल 'निर्भय' भजनोपदेशक
ग्रा. पो. बहीन, पलवल (हरियाणा)
मो. 9813845774

संविधान लागू होने की 68वीं वर्षगांठ पर

गांधीवादी–नेहरूवादी इसे सर्वोत्तम बताते हैं जबकि सावरकरवादी–परमानन्दवादी इसे हिन्दू विरोधी और सबसे घटिया कहते हैं। इसमें 125 संशोधन हो चुके हैं। अंग्रेजी को सह राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया गया है। उर्दू को बढ़ावा दिया जा रहा है। अन्य दोष इस प्रकार हैं:–

- अखिल भारतीय स्तर पर गोवधबन्दी और शराबबन्दी लागू करने का कोई प्रावधान नहीं है।
- परतन्त्रता काल में 3032 मन्दिर तोड़कर अवैध रूप से मस्जिदें बना दी गई थीं इनकी पुर्नवापसी और जीर्णोद्वार की कोई व्यवस्था नहीं है।
- विभाजन के दोषी–मुस्लिम, ईसाई को भी धर्म प्रचार करने और धर्म बदलने का अधिकार देकर भयंकर गलती की गई है।
- सरकार ने 2004 से कर्मचारियों की पेन्शन बन्द कर दी है, लेकिन विधायकों और सांसदों तथा मंत्रियों की पेन्शन क्यों जारी है?
- अपराधी–जेल में बन्द–भ्रष्ट नेताओं को चुनाव लड़ने की की छूट अभी तक क्यों जारी है?
- प्रत्याशियों की न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता निश्चित की जाए। जैसे विधायकों के लिए बी.ए. तथा सांसदों के लिए एम.ए.। अल्प संख्यक शब्द की परिभाषा या व्याख्या नहीं की गई है।
- मुर्दा हिन्दू की सोच समझते हुए कांग्रेस ने मुस्लिम–ईसाई–सिख–बौद्ध और पारसियों को अखिल भारतीय स्तर पर अल्पसंख्यक घोषित करते हुए अनुच्छेद 29 तथा 30 के द्वारा विशेषाधिकार देकर बड़ी गलती की है।
- देश को धर्म निरपेक्ष घोषित किया गया है ऐसी दशा में किसी भी समुदाय को अल्प– संख्यक मानना अनुचित और गलत है।
- पंजाब–हरियाणा उच्च न्यायालय ने सही कहा है, कि अल्पसंख्यकों का निर्धारण राज्य स्तर पर किया जाना चाहिए।
- अस्थाई अनुच्छेद 370 को हटाने की कोई समय सीमा क्यों नहीं रखी गई?
- आरक्षण जाति के आधार पर केवल 10 वर्षों के लिए दिया गया फिर बार–बार इसे क्यों बढ़ाया जाता है? अब इसका आधार आर्थिक कर देना चाहिए। अधिकतम 5 लाख रुपए वार्षिक की आय वालों को ही आरक्षण का लाभ मिलना चाहिए।
- यदि समाज 100 वर्षों तक नेहरू–गांधी समर्थक ही बना रहा तो देश की सत्ता मुस्लिम–ईसाई गठबन्धन के पास जा सकती है। तब हिन्दू पुनः गुलाम हो सकता है। अतः इस ओर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

आई.डी. गुलाटी, 18/186,
टीचर्स कॉलोनी, बुलन्दशहर–203001
मो. 08958778443

****

वैदिक साधना आश्रम तपोवन देहरादून में चार दिवसीय सामवेद पारायण यज्ञ आयोजित

वैदिक साधना आश्रम तपोवन के मंत्री श्री प्रेम प्रकाश जी के आवास पर चार दिवसीय सामवेद पारायण यज्ञ का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यसमाज लक्ष्मणचौक, देहरादून के विद्वान पुरोहित पंडित रणजीत शास्त्री थे। आप सामवेद पारायण यज्ञ के चारों दिन यज्ञ में आरम्भ से समापन तक उपस्थित रहे और यजमानों व दर्शक श्रोताओं का मार्गदर्शन करते रहे। यज्ञ में वेद मन्त्रोच्चार देहरादून स्थित द्रोणस्थली कन्या गुरुकुल की चार छात्राओं ने किया। बीच में आप उपदेश भी देते रहे। आपने कहा कि यज्ञ करने वाले यजमान की यज्ञ करने में सभी कामनायें पूर्ण होती हैं। सभी याज्ञिकों को दैनिक यज्ञ करने सहित शुभ संकल्प भी उन्होंने करवाये। यज्ञ के पश्चात चार दिन वैदिक विद्वानों के उपदेश भी होते रहे। यशस्वी संन्यासी स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी का यज्ञ के महत्व पर प्रभावशाली प्रवचन भी हुआ। यजमान परिवार द्वारा विद्वान पुरोहित व यज्ञ के

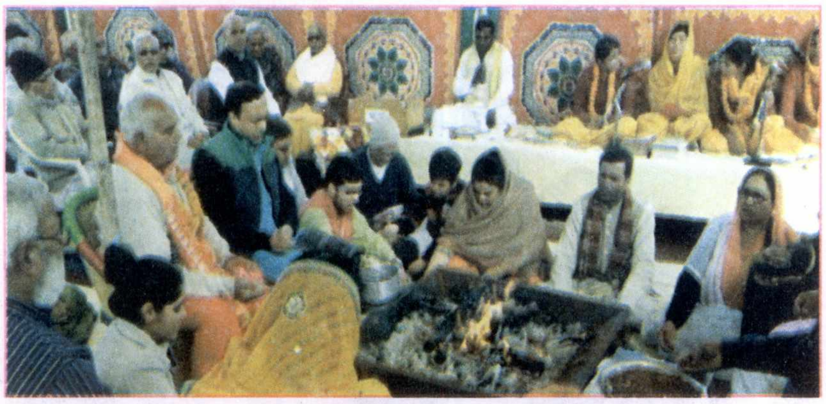

ब्रह्मा श्री रणजीत सिंह जी का शाल एवं उपहार प्रदान करके सम्मान किया। गुरुकुल की सभी छात्राओं का सम्मान भी किया गया व उन्हें भेंट किये गये।

आर्य समाज के विद्वान एवं प्रकृति चिकित्सा के सुयोग्य वैद्य डॉ. विनोद शर्मा ने अपने प्रवचन में कहा कि वेदों की सार्थकता तभी है जब हम वेदों को पढ़े व सुनें एवं उनके अनुसार आचरण करें। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा के महत्त्व पर प्रकाश डाला। देहरादून के वैदिक साधन आश्रम तपोवन में प्रति माह 20 से 26 की तिथियों में आयोजित किये जाने वाले प्राकृतिक चिकित्सा शिविरों की भी उन्होंने चर्चा की। उन्होंने कहा कि हम प्राकृतिक चिकित्सा से सभी साध्य व असाध्य रोगों को दूर कर सकते हैं। उन्होंने समाज में सबसे अधिक व्याप्त रोग मधुमेह व रक्तचाप आदि की चर्चा की और कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा से इन व ऐसे अनेक रोगों पर नियन्त्रण किया जा सकता है। विद्वान् वक्ता ने कहा कि यदि किसी आर्य को कोई रोग है तो इसका सीधा अर्थ है कि उसके जीवन में कहीं कोई खोट है। डॉ. शर्मा ने कहा कि जो व्यक्ति दैनिक यज्ञ करता है और आचरण के नियमों का पालन करता है उसको मधुमेह व रक्तचाप आदि रोग नहीं होते। उन्होंने आगे कहा कि यज्ञ से अनेक लाभ होते हैं। यज्ञ एक चिकित्सा पद्धति भी है। प्राचीन आर्यों व ऋषियों का आश्रय उन्होंने यज्ञ को बताया। श्री शर्मा ने कहा कि यज्ञ कुण्ड की रचना भी वैज्ञानिक रीति से की जानी चाहिये तभी यज्ञ का अधिकतम लाभ होगा। आजकल समाज में प्रचलित फास्ट फूड के सेवन से होने वाली हानियों से भी उन्होंने लोगों का आगाह किया। विद्वान वक्ता ने यज्ञ को स्वास्थ्य एवं रोगी की चिकित्सा से जोड़ने का परामर्श दिया। डा. विनोद कुमार शर्मा के व्याख्यान के बाद द्रोणस्थली कन्या गुरुकुल की कन्याओं ने एक समूह भजन प्रस्तुत किया जिसके बोल थे **'ज्ञान का सागर चार वेद यह वाणी है भगवान की इसी से मिलती सब सामग्री जीवन के कल्याण की।'** इसके बाद पं. वेद वसु शास्त्री एवं प. पीयूष शास्त्री जी के प्रवचन भी हुए।

अलवर में आर्य समाज ने किया जर्सी वितरण

आर्य समाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में जर्सी वितरित समारोह आयोजित किया गया। समारोह का प्रारम्भ यज्ञ से हुआ। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता, प्रधान, आर्य कन्या विद्यालय समिति, अलवर रहे तथा कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री अमर मुनि जी पूर्व महामंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान ने की।

आर्य समाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर की ओर आर्थिक रूप से कमजोर महिला और पुरुष को लगभग 250 कार्डिगन एवं जर्सियां वितरित की गई।

श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता, प्रधान, ने

कहा नर सेवा नारायण सेवा होती है प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

श्री अमर मुनि जी ने वेदों के मंत्रों द्वारा ज्ञान के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि दान करना पुण्य का कार्य है, मनुष्य को त्यागपूर्ण भोग करना चाहिए। आर्य समाज सदैव जरूरत मंदों की सहायता करता रहता है। गरीबों की सहायता करना हमारा कर्तव्य है।

श्रीमती कमला शर्मा ने कहा कि हमारे पूज्य ऋषि दयानन्द ने वेदों को सर्वाधिक महत्व दिया है और वेदों में सर्वाधिक महत्व यज्ञ को दिया गया है और परोपकार करना ही यज्ञ है।

आर्य समाज स्वामी दयानन्द मार्ग के प्रधान श्री प्रदीप कुमार आर्य ने सभी का धन्यवाद करते हुए आभार व्यक्त किया।

☞ *पृष्ठ 01 का शेष*

डी.ए.वी. बागपत में ...

व तुलसी पौध आदि देकर सम्मानित किया गया।

डॉ. अनिता करवाल ने डी.ए.वी. छात्रों द्व ारा वेद मंत्रों के उच्चारण और स्वागत गान प्रस्तुति की सराहना की और कहा कि मैं वेद मंत्रों और स्वागत गान को सुनने के बाद डी.ए.वी. स्कूलों के उच्च शैक्षिक स्तर की कल्पना कर सकती हूँ।

माननीय मंत्री महोदय डॉ. सत्यपाल सिंह ने भी वर्तमान शिक्षा प्रणाली व पाठ्यक्रम में बदलाव लाने की आवश्यकता पर बल दिया, और कहा कि वर्तमान समय में ऐसा पाठ्यक्रम लागू किया जाना चाहिए जिससे छात्र अपनी मूल संस्कृति, मातृ भाषा से जुड़े रहें और नैतिक मूल्यों को अपनाकर राष्ट्र निर्माण में सहयोग दें। हमें डी.ए.वी. शिक्षण प्रणाली की तरह ही छात्रों को वैदिक शिक्षण पद्धति और नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूक करना चाहिए। उन्होंने नैतिक मूल्यों के उत्थान और छात्रों को वैदिक संस्कृति से जोड़े रखने के लिए डी.ए.वी. संस्था की प्रशंसा की।

डी.ए.वी. डायरेक्टर डा. वी. सिंह ने अतिथियों को भारत व शिक्षा के क्षेत्र में महर्षि दयानन्द जी के योगदान व महात्मा हंसराज जी के त्याग व समर्पण से अवगत कराया। उन्होंने सामाजिक बुराईयों को दूर करने और राष्ट्र के उत्थान में डी.ए.वी. के योगदान का उल्लेख करते हुए कहा कि डी.ए.वी. संस्था किस तरह सरकार के 'बेटी बचाओं, स्वच्छ–भारत अभियान और डिजिटल इंडिया आदि कार्यकमों में अपना योगदान दे रही है। उन्होंने डी.ए.वी. संस्था में अध्ययन प्राप्त करने वाली कई महान हस्तियों, 3 भूतपूर्व प्रधानमंत्रियों, नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली विभूतियों तथा अन्य कई क्षेत्रों में महान कार्य करने वाले व्यक्तियों से भी उपस्थित जन समूह को अवगत कराया। उन्होंने बताया कि किस तरह हमारे परम आदरणीय पदम श्री विजेता प्रेसीडेन्ट डॉ. पूनम सूरी जी के निर्देशन में सभी डी.ए.वी. स्कूल भारत के अच्छे नागरिक बनाने के लिए कठिन परिश्रम कर रहे है।

कार्यक्रम के अन्त में प्रबन्धक डॉ. अल्पना शर्मा ने उपस्थित अतिथियों व सभी विद्यालयों के प्रधानाचार्यो को धन्यवाद दिया।

☞ *पृष्ठ 01 का शेष*

डी.ए.वी. शोलापुर में...

अध्यक्षीय भाषण में प्रिं. उबाळे जी ने कहा की, कला कौशल से युक्त व्यक्ति ही पूर्णता को प्राप्त कर सारे जहाँ को अपनी ओर आकर्षित कर सकता है। इस नये उपक्रम प्रि. डॉ. व्ही. पी. उबाळे एवं उनकी टीम ने बढ़िया मेहनत की जिससे वे धन्यवाद के पात्र है। लड़कियों में ऐसे कला गुण विकसित होने के लिए डी.ए.वी. शोलापुर ने सांस्कृतिक मंच उपलब्ध कराके युवतियों को बढ़िया अवसर प्रदान किया।

कार्यक्रम में शास्त्रीय नृत्य के साथ मूक नाट्य, मिमिक्री, फेशन शो, व्यक्तिगत एवं समूहगीत गायन तालवाद्य आदि कलाओं का प्रदर्शन हुआ जिससे उपस्थिति ने प्रफुल्लित होकर भूरि–भूरि प्रशंसा की। यह कार्यक्रम स्थानीय सचिव श्री महेशजी चोप्रा साहब के मार्गदर्शन अनुसार संपन्न हुआ।

इस महान प्रतियोगिता के लिए सौ. कामिनी गांधी, सो. भादुले मैडम, एवं सौ. विशाखा दासरी इन्होंने परिक्षक के रूप में बढ़िया भूमिका निभाई है। अंत में युवतियों ने इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए डी.ए.वी. को धन्यवाद दिया।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2018-19
Posted at N.D.P.S.O. ON 17/18-01-2018

आर. आर. बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, बटाला में नववर्ष पर यज्ञ का आयोजन

आर. आर. बावा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्ज़, बटाला में श्री एस.पी. मरवाहा चेयरमैन स्थानीय समिति की अध्यक्षता में कॉलेज प्रिंसिपल प्रो. डॉ. (श्रीमती) नीरु चड्ढा के निर्देशानुसार नववर्ष के उपलक्ष्य में एवं शीतोवकाशोपरान्त सत्र के आरम्भ पर यज्ञशाला में यज्ञ का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर श्री बालकृष्ण मित्तल जी, सचिव डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्तृ समिति, नई दिल्ली मुख्यतिथि स्वरूप पधारे। स्थानीय समिति से श्री राजेश कवात्रा, श्री विनोद सचदेवा, श्री भारत भूषण अग्रवाल, श्री सतीश सरीन, प्रिंसीपल राजीव भारतीय जिया लाल मित्तल डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, गुरदासपुर विशेष रूप से पधारे।

प्रो. सुनील दत्त शर्मा ने यज्ञ का सम्पादन करवाया। मुख्यातिथि सहित सभी उपस्थित महानुभावों ने कॉलेज प्राध्यापकवर्ग एवं कर्मचारी वर्ग सहित छात्राओं ने वैदिक मन्त्रोंच्चारण सहित यज्ञभगवान् में आहुति देकर इस मंगलवेला में समस्त विश्व शान्ति, कल्याण और मानवमात्र के लिए शुभता की प्रार्थना की। श्री बाल कृष्ण मित्तल जी ने कॉलेज द्वारा की गई त्रैमासिक गतिविधियों की रिपोर्ट “नव्यदृष्टि” के अंक का विमोचन भी किया एवं कॉलेज की दिन-प्रतिदिन हो रही प्रगति के लिए हर्ष व्यक्त करते हुए प्रिंसिपल महोदय एवं सारे स्टाफ को साधुवाद दिया एवं इस नववर्ष में बढ़ चढ़कर काम करने के लिए प्रेरणा देते हुए शुभकामनाएं दी। श्री एस.पी. मरवाहा ने भी प्रिंसीपल महोदय एवं समस्त स्टाफ एवं छात्राओं को आशीर्वचन कहे एवं शुभकामनाएं दी। श्री राजेश कवात्रा ने कॉलेज की प्रगति पर संतोष व्यक्त करते हुए इसी प्रकार शिखर छूते रहने के लिए प्रेरित किया।

प्रिंसिपल महोदया ने इस नववर्ष एवं इस सत्र के आरम्भ पर सभी को शुभकामनाएँ देते हुए, अपने विचारों में शुद्धता रखने के लिए कहा, उन्होंने आये हुए मुख्यातिथि श्री बाल कृष्ण मित्तल, श्री एस.पी. मरवाहा सहित सभी सभासदों को धन्यवाद किया।

डी.ए.वी. जसोला विहार ने लगाया चरित्र निर्माण शिविर

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल जसोला विहार के प्रांगण में साप्ताहिक चरित्र-निर्माण शिविर का आयोजन किया गया। इस यज्ञ में विद्यालय के यशस्वी विद्वान प्राचार्य डॉ. विनोद कुमार बडथ्याल जी ने स्व उपस्थिति देकर तथा विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि विद्यालय को अपनी मेहनत व लगन के द्वारा उन्नति के चरम मुकाम पर पहुंचाना है। यह कार्य बड़ी मेहनत और त्याग से ही संभव है। प्राचार्य जी ने चरित्र निर्माण की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि

हम सबको मिलकर इस दिशा में सक्रिय भाग लेना है जिससे जब छात्र यहाँ से पढ़कर निकले तो “कृण्वन्तो विश्वमार्यम् की पंक्तियों को चरितार्थ स्वजीवन में कर राष्ट्र-निर्माण में स्वयोगदान देकर उदाहरण प्रस्तुत करें।

इस सुअवसर पर बच्चों को प्रतिदिन यज्ञानुष्ठान, योग, आहार-विहार पर विशेष बल दिया गया। अंत में संस्कृत-विभाग की ओर से साप्ताहिक चरित्र-निर्माण की सफलता पर सभी बच्चों, अध्यापकों एवं प्राचार्य जी का आभार प्रकट करते हुए शान्ति पाठ द्वारा शिविर का समापन किया गया।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पेहोवा में वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह

स्थानीय डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल में वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम का शुभारंभ कार्यक्रम के मुख्यातिथि श्री सुधीर मित्तल जी (जस्टिस पंजाब एवं हरियाणा हाईकोर्ट) के कर कमलों द्वारा मां सरस्वती के समक्ष द्वीप प्रज्ज्वलित करके किया। इसके पश्चात स्कूल के प्रधानाचार्य श्री एन.सी. बिंदल जी ने मुख्य अतिथि जी का स्कूल प्रांगण में पधारने पर स्वागत किया व स्कूल की उपलब्धियों को बताया। इस अवसर पर स्कूल के बच्चों ने शानदार रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसे देखकर दर्शक मंत्रमुग्ध हो गए। बच्चों द्वारा प्रस्तुत नाटक-'ए लहू किस दा है' कमाल

Kamdev Jha(Manager), N.C. Bindal (Principal) , Mr. Justice Sudhir Mittal (Judge Punjab & Haryana High Court, chd.) , Bharat Bhushan Sharti (Chairman Haryana Staff Selection Commission)

का था। बच्चों द्वारा प्रस्तुत स्किट-तसवीरा बोलदिया-देखकर दर्शक हंसते-हंसते लोटपोट हो गए। इसके अतिरिक्त बच्चों द्वारा प्रस्तुत हरियाणवी नृत्य, गिद्दा, राजस्थानी डांस, वेस्टर्न, डांस, भंगड़ा आदि ने दर्शकों का मन मोह लिया। बच्चों द्वारा देशभक्ति पर प्रस्तुत कोरियोग्राफी व कव्वाली-वतन का हर बशर ने अपना तो सभी के अंदर देशभक्ति का जज्बा भर दिया। सांस्कृतिक कार्यक्रम के पश्चात मुख्य अतिथि जी ने विभिन्न कक्षाओं में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय आने वाले विद्यार्थियों एवं विभिन्न प्रतियोगिताओं में जीतने वाले खिलाडियों व कलाकारों को सम्मानित किया। मुख्य अतिथि जस्टिस सुधीर मित्तल जी ने अपने संबोधन में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास पर बल दिया व स्कूल की गतिविधियों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। कार्यक्रम के अंत में स्कूल के मैनेजर डॉक्टर काम देव झा जी ने मुख्य अतिथि व आए हुए सभी गणमान्य व्यक्तियों का धन्यवाद व्यक्त किया। इस अवसर पर जिला सैशन जज शालिनी सिंह नागपाल, सिविल जज पेहोवा श्री अमितेंदर जी एवं संजय जी, स्कूल के चेयरमैन श्री शिव दर्शन मुरार जी, विभिन्न स्कूलों के प्रिंसिपल अन्य गणमान्य व्यक्ति व स्कूल स्टॉफ के सदस्य मौजूद रहे।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**